मुनिश्री भगवतीलालजी 'निर्मल'

पुष्प

बिखरे पुष्प

लेखक :

श्रमणसंघीय एवं जैन दिवाकर प्र० व०

श्री चौथमल जी म० के प्रशिष्य

तपस्वीवर्य प्रिय व्याख्यानी

मुनिश्री मंगलचन्द जी म०

के सुशिष्य, संस्कृत विशारद

मुनिश्री भगवतीलालजी 'निर्मल'

प्रकाशक :

श्री वर्द्धमान जैन ज्ञानपीठ

टेम्भूर्णी, जिला—शोलापुर

पुस्तक : बिखरे पुष्प

लेखक : भगवती मुनि 'निर्मल'

सम्पादक : रूपेन्द्रकुमार पगारिया

प्रकाशक : श्री चंदनलाल जी विलासकुमार सोनी मीण्डे
द्वारा–श्री वर्द्धमान जैन ज्ञानपीठ
टेम्भूर्णी, जिला–शोलापुर (महाराष्ट्र)

प्रथम प्रकाशन : वसन्त पचमी २०२८

प्रथमसंस्करण : एक हजार

मूल्य : तीन रुपये

मुद्रणव्यवस्था
संजय साहित्य संगम
दालबिल्डिंग न. ५, आगरा-२

मुद्रक
रामजीकुमार शिवहरे,
मोहन मुद्रणालय
१३/३०६, नाई की मंडी, आगरा-२

जनके सतत प्रेरणा प्रकाश से, मै साधना पथ का पथिक बना हूं

जिनके अविरत्त उपदेश प्रवाह से, मै साहित्य क्षेत्र मे

डगमगाते कदम रख रहा हूं। उन्ही प्रेमलमूर्ति

प्रियव्याख्यानी तपस्वी श्री मगलचन्दजी म०

के चरण-कमलो मे सभक्ति सादर समर्पित !

—भगवती मुनि 'निर्मल'

लेखक की कलम से

साहित्य समाज की सभ्यता का दर्पण है। जिस प्रकार सूर्य अन्धकार को नष्ट करने मे समर्थ है उसी प्रकार साहित्य अज्ञान तम को नष्ट करने मे समर्थ होता है। जिसका विचार पक्ष जितना मजबूत है, वह उतना ही शक्तिशाली है। लज्जावती पौधा तो अगुली के स्पर्शन करने से लज्जित होता है, किन्तु विचारो मे वह शक्ति है कि विना स्पर्शन किये ही मानव मन आकर्षित होता है। एक दूसरे पर विचारो का ही प्रभाव पडता है। यदि आपके मन मे किसी के प्रति अच्छे विचार आये तो सामने वाला व्यक्ति भी आपके प्रति अच्छे विचार ही रखेगा। यदि आपने किसी के प्रति कुत्सित विचार किये है तो सामने वाला व्यक्ति भी कुत्सित विचार रखेगा ही। विचारो मे चुम्ब-कीय आकर्षण है। आपके मन मे जो विचार छिपे है, वही विचार आप सामने वाले व्यक्ति से सुनते ही आप कह उठते है कि आपने मेरे मन की वात कह दी।

सूर्य के प्रकाश की भाँति आज यह स्पष्ट होता जा रहा है

कि विचारकने जिन बातो का विचार भूतकाल मे किया था। आज वे स्पष्ट प्रत्यक्ष होती जा रही है। विचारको के विचार किसी देश विशेष की थाती नही, वे सीमातीत है न वे किसी काल मे बाँधे जा सकते हैं, वे कालातीत है।

अपने विचार को अच्छी तरह सरक्षण देना चाहिये, क्योकि विचार स्वर्ग मे सुने जाते हैं। विचाराभिव्यक्ति मानव के अन्त-र्द्वन्द्व की स्पष्ट झाँकी दृष्टिगोचर होती है। जिस किसी के पास अनमोल अच्छे विचार है, वह एकान्त रहते हुए भी एकान्त नही रहता, वह सदा ही उत्तम विचारो मे घिरा रहता है। मानव स्वय विचार करता है तथा दूसरो के विचार सुनता भी है। विचारों के इस आदान प्रदान परम्परा ने विकास के समस्त द्वार खोले है। समृद्धि एव अभिवृद्धि का पथ प्रशस्त किया है। जिस प्रकार चन्दन की महक, केवडे की सुगन्ध जितना अन्दर से रखने का प्रयत्न करेंगे उतनी ही सुवास प्रस्फुटित होगी। जितना भी हम विचारो को रोकने का प्रयत्न करेंगे उतना ही विस्तार तीव्र गति से बाहर उद्गमित होगा।

अपने विचारो की अभिव्यक्ति करना प्रत्येक विचारको ने अपना कर्तव्य पथ प्रकाशित किया है उनके विचारो की अमूल्य कृतियाँ ससार मे पथ के दीप का कार्य करती है। 'विचार पुष्प' मे भी समय-समय पर विचाराभिव्यक्त सुभाषितों से ही संचित

पुष्प है जो चतुर्दिक महापुरुषो की वाणी से एव अध्ययन, मनन से सुवासित पुष्प है ।

सर्वप्रथम मैं परम श्रद्धेय सद्गुरुवर्य तपोधनी सफल प्रवक्ता प्रियव्याख्यानी मुनि श्री मगलचन्दजी म सा के उपकारो से इतना ऋणी हू जो कदापि उऋण नही हो सकता । आज जो कलम पकडना सीखा हूँ वह सर्व गुरुदेव के असीम उपकार का ही सुफल हे ।

मै उन लेखको, विचारको एव दैनिको, मासिक पत्र-पत्रिकाओ का भी अत्यन्त आभारी हू उन लेखको की कृतियो का भी, जिनका मैंने अपनी इस कृति मे किसी न किसी प्रकार सहयोग लिया है ।

श्रद्धेया स्थविरपद विभूषिता महासती श्री सज्जन कुवर जी म० सा० के उपकार को तो भूल ही नही सकता जिनके अमर उपदेश से मै इस पथ का पथिक बना हूँ ।

सम्पादक महोदय को तो धन्यवाद क्या दे, क्योकि वे तो अपने ही हैं । इत्यलम् । सुज्ञेषु कि वहुना

जमीं फलक बनी है अपने चिराग लेकर
कह दो आसमा से अपने दिये बुझा दे ।।

खान्देशमा —भगवती मुनि 'निर्मल'

श्री वर्द्धमान जैन ज्ञानपीठ

टेम्भूर्णी जि० शोलापुर

दानदाताओं की शुभ नामावली

साहित्य समाज का दर्पण है। जिस समाज मे अधिक साहित्य का वाचन मनन प्रकाशन होता हो, वही समाज जीवित माना जाता है। जिन महानुभावो, दानवीरों ने इस साहित्य प्रकाशन मे योग्य आर्थिक, बौद्धिक सहायता दी है उनका मैं कृतज्ञ हू, भविष्य मे भी इसी प्रकार सहायता मिले इसी भावना के साथ उनकी शुभ नामावली यहा दी जा रही है।

आपका

बकटलाल सोनी गांधी

मन्त्री

श्री वर्द्धमान जैन ज्ञानपीठ

टेम्भूर्णी

आधार स्तम्भ

१ श्रीमान्‌दानवीरसेठ प्रवीणकुमार हिराचन्द जी बाटविया बम्बई

२ „ बकटलालजी विलासकुमार सोनी मीण्डे, टेम्भूर्णी

३. „ प्रेमराज जी जगदीश प्रकाश वर्मा, भद्रावती

४ „ रावतमल वनेचन्द एण्ड सन्स, शिमोगा

५ „ सी० पृथ्वीराज जी गादिया, बैंगलोर

६ „ गुप्तदान, बैंगलोर

७. „ मानकचन्द जी के स्मरणार्थ,
मोहनलालजी, मोतीलालजी, मिश्रीलालजी, रमणलालजी, जयन्तिलालजी मोनी मीण्डे के परिवार से, शोलापुर

८ „ गगास्वरूप शान्तिबाई हस्तिमल जी पुनमिया, बम्बई

९. „ भवरलालजी गुलाबचदजी सकलेचा, बैंगलोर

स्तम्भ

१ श्रीमान दानवीर सेठ सीरेमल धूलाजी एण्ड सन्स, बाणावार
२ „ छगनमलजी धनराजजी मुणोत, कडूर
३ „ जुगराजजी गुलाबचंदजी बांठिया, भद्रावती
४ „ सौ. सरदारबाई केवलचंद जी बोरा, रायपुर
५ „ समरथमलजी भंवरलालजी गलैच्छा, बैंगलोर
६ „ गरास्वरूप अगरबत्ती, बैंगलोर
७ „ बंशीलालजी शान्तिलालजी पोरवाल, कोप्पल
८ „ ब्रह्मानन्दजी देवराजजी शर्मा, थाणा
९ „ तारानन्दजी चम्पालालजी छाजेड़, थाणा
१०. „ जसराजजी जवरीलालजी गोलेच्छा, बैंगलोर
(सौ० बापुबाई के ११९ उपवास के उपलक्ष में)

माननीय सस्दय

श्रीमान पुखराजजी चैनराज गादिया	शिकारपुर
,, धर्मचन्द सुभापचन्द्र बोहरा	वैंगलोर
,, एम० शकरलाल लुनावत	,,
,, सोहनलालजी इन्द्रचन्द्रजी डागा	कडूर
,, सम्पतराजजी केशरीमलजी कवाड	भद्रावती
,, केशरीमलजी भागचदजी वोहरा	वाणावार
,, नेमिचदजी पारसमलजी काढेड	वैंगलोर
,, थानमलजी पुखराजजी उगा	,,
,, मोहनलालजी मागीलालजी सिंघवी	शिमोघा
,, सिरेमलजी चम्पालालजी मुथा	बम्वई
,, ख्यालीलालजी घासीरामजी जैन	पालघर
,, धनराजजी गिरेराजजी मुथा	हग्रीबोमन हल्ली
,, सौ० कमलावाई मोतीलालजी गोलेच्छा	तिरमसी
,, ,, गुलाववाई चौथमलजी वोहरा	रायपुर
,, ,, दाखीवाई अमरचदजी बोहरा	,,
,, नारायणदास लखमीचदजी मुणोत	दौण्ड
,, मिठालालजी झूम्वरलालजी मुणोत	काण्ठी
,, श्रीमती धन्नाबाई मोहनलालजी खड्गाधी	आएलगाव
,, सौ० सोहनराजजी समदडिया	वैंगलोर

श्रीमान् सोहनराजजी मेघराजजी जैन — अरसीकेरे

,, केशरीमलजी पन्नालालजी गुन्हेचा खण्डवीकर — वार्शीटाउन

,, श्रीमती पुतलाबाई अगरचंदजी ककुगोट — वार्शीटाउन

,, पुखराजजी गुलाबचन्दजी बाठिया — भद्रावती

,, चिमनलालजी गोकुलचन्दजी देरासिया की माताजी अच्छीबाई — बैंगलोर

,, पुखराजजी सुभाषचन्दजी कटारिया — हुनगुन्द

,, सुखलालजी माटेड ब्रदर्स — कोरेगाव

,, गुप्तदान — नान्देशमा

,, ,, — ,,

,, राजमलजी प्रेमराजजी लूंकड — वडगाव

,, मानकचन्दजी राजमलजी बाफना — वडगाव (म.)

,, भवानी टिम्बर एण्ड को० — कादूर

,, गुप्तदान — बैंगलोर

,, मदनराजजी अमृतलालजी मुराना — शिकारपुर

,, तेजराजजी मकाना — दोड बालापुर

,, मगनलालजी केशवजी गार्दि — बैंगलोर

,, रजनीभाई डी गाठिया — ,,

,, शान्तिभाई केशवजी जैन — ,,

श्रीमान् मिश्रीमलजी बौहरा की धर्मपत्नी घीसाबाई वैंगलोर
,, चान्दमलजी की धर्मपत्नी सहाणी बाई ,,
,, लखमीचन्दजी बाठिया की माताजी रगुबाई ,,
,, शान्तिमलजी मागीलाल जी बकी ,,
,, जवानमलजी मागीलालजी बधाणी ,,
,, केशरीमलजी सुजानसिहजी बूरड ,,
,, ए० सोहनराजजी भन्साली ,,
श्रीमती भवरीबाई भूरीबाई जैन ,,
,, मीठालालजी कुशलराजजी छाजेड ,,
,, पुखराजजी ओसवाल की धर्मपत्नी राधाबाई ,,
,, गुप्तदान
,, हीरालालजी धोखा की धर्मपत्नी हासुबाई ,,
,, गणेशमलजी पुसामलजी नाहर शिकारपुर
,, भवरलालजी माणकचन्दजी जागडा कोप्पल
,, रामीबाई ह० हेमराजजी दानमल मेहता ,,
,, सम्पतराजजी चोपडा की धर्मपत्नी प्यारीबाई, रायपुर
,, सोहनराजजी चोपडा की धर्मपत्नी बादलबाई कोप्पल
,, चुन्नीलालजी हिरालालजी एण्ड क ,,
,, माणकचन्दजी मुथा की धर्मपत्नी सौ० उमरावबाई ,,
,, महिला समाज रायपुर

श्रीमान देवीचन्दजी चम्पालालजी जैन — भोपाल
गुप्तदान — बैंगलोर
,, धर्मचन्दजी गादिया — वेल्लुर
,, वृद्धिचन्दजी पुन्नालालजी रुणवाल — विजापुर
,, कान्तिलालजी अम्बालालजी रुणवाल — ,,
,, घीसीराम मूलचन्दजी रुणवाल — ,,
,, बंशीलालजी मदनलालजी वेद मूथा — शोलापुर
,, शान्तिलालजी पुखराजजी मुथा — भद्रावती
,, कपूरचन्दजी पोपटलालजी जैन — कूर्डू
,, भीकचन्दजी अमृतलालजी गुगले — करमाला
,, उल्लासबाई की तरफ से ह० हरकचन्द प्रेमराज भंडारी — शिन्दे
,, हीरालालजी किसनदास जी पूनमचन्दजी गुन्देचा — शिन्दे
,, किसनदासजी कनकमलजी गांधी — श्री गोन्दा
,, दगडूलालजी रतनलालजी कटारे — ,,
,, मगनलालजी किसनदासजी गांधी — ,,
,, चन्दनमलजी मोतीलालजी गांधी — ,,
,, फूलचन्दजी [illegible] — शिन्दे
,, रतनलालजी अमृतलालजी पितलिया — बेलवंडी
,, सूरजमलजी धनमलजी गांधी — [illegible]

स्व सौ कचनकुवर बाई
सुपत्री श्रीमान वच्छराज
जी मिगवी, नादेशमा

आपका परिवार वहुत
ही धर्मप्रेमी एव उदार
हृदय का है ।

श्रीमान आगुजी मागीलालजी जैन	दावणगिरी
,, मूलचन्दजी चुन्नीलालजी धोका	चीचवड
,, शकरलालजी बाबूलालजी मुथा	,,
,, भेरुमलजी डालचन्दजी कोठारी	फतेपुर
,, कन्हैयालालजी केमुलालजी कोठारी	,,
गुप्तदान	
,, गणेशमलजी चौधरी की सुपुत्री शारदाबाई	कोल्यारी
,, भंवरलालजी रतनलालजी चौधरी	,,
,, हरकचन्दजी बोहरा	कोल्हार
,, पन्नालालजी माणकचन्दजी कोठारी	मीरजगाव
,, उदयलालजी सा० पोखरना	वाटीगांव

श्रीमान भूरीलाल जी वृद्धिचन्द जी छगनलाल जी सिंगवी,

नादेशमा

श्री छगनलाल जी की धर्मपत्नी स्व सौ मोहनबाई के स्मरणार्थ

बिखरे पुष्प

अकथा :
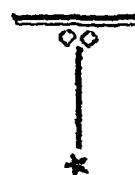
□ मिथ्यादृष्टि-अज्ञानी चाहे वह साधुवेष में हों या गृहस्थ के वेष में उसका कथन-उपदेश 'अकथा' है।

अकर्मण्य :

□ पुरुषार्थी मनुष्य सर्वत्र भाग्य के अनुसार प्रतिष्ठा पाता है, परन्तु जो अकर्मण्य है वह सम्मान से भ्रष्ट होकर घाव पर नमक छिड़कने के समान असह्य दुःख भोगता है।

अकर्मण्यता :

□ अकर्मण्यता मृत्यु है।

□ प्रकृति अपनी उन्नति और विकास में रुकना नहीं जानती और अपना अभिशाप प्रत्येक अकर्मण्यता पर लगाती है।

अकृतज्ञ :

□ अकृतज्ञ मानव से एक कृतज्ञ कुत्ता अच्छा है।

अकृतज्ञता :

☐अकृतज्ञता—मानवता के प्रति विश्वासघात है।

अकेला :

☐बहुत से लोग ऐसा मानते हैं—भाई ! मैं अकेला क्या कर सकता हूँ ? परन्तु उन्हें याद रखना चाहिए कि आकाश मण्डल में सूर्य अकेला ही होता है। टोलि तो बन्दरों के हुआ करते हैं। सिंह तो अकेला ही वनविहार करता है।

अकेला रहे :

☐यदि अपने से अधिक गुणी अथवा अपने समान गुणवान निपुण साथी न मिले तो व्यक्ति अकेला रहे, किन्तु दुर्गुणियों के और दुर्व्यसनियों के साथ न रहे।

☐पशुओं ने अकृतज्ञता मानव के लिए छोड़ दी है।

अक्रोध :

☐जो क्रोध करने वाले पर क्रोध नहीं करता, वह अपने को और दूसरे को भी महान भय से बचा लेता है। ऐसा पुरुष दोनों का चिकित्सक है।

☐कार्यदक्षता, अमर्ष (शत्रु पक्ष द्वारा तिरस्कार को सहन न कर सकने का भाव) शूरता और शीघ्रता ये सब तेज के गुण हैं। क्रोध के वश में रहने वाले मनुष्य को ये गुण सुगमता से प्राप्त नहीं हो सकते।

अक्लहीन •

□पशुओ मे भेस अक्लहीन मानी जाती है। जिस व्यक्ति को हिताहित का ज्ञान नही है वह महिपासुर का अवतार माना जाता है।

अक्षयकोष :

□ये आखे, ये हाथ, ये पैर, यह शरीर और ये प्राण धन के अक्षय कोप है, उन्हे पहचानो और परिश्रम करो। श्रम से तुच्छ मानव भी महामानव बन जाता है।

अच्छाइया :

□गुलाबो की वर्षा कभी नही होगी। अगर हमे अधिक गुलाबो की इच्छा है तो हमे और पौधे लगाने चाहिए।

अजागृत :

□अजागृत आत्मा पर ही प्रकृति का अधिकार होता है।

अज्ञान :

□स्वप्न मे देखे हुए डरावने सपनो का भय कब तक रहता है? जब तक आँख नही खुलती। अज्ञानवश होने वाली भूलो का भय कब तक है? जब तक ज्ञान प्राप्त नही होता।

□अज्ञान सबसे बडा दु ख है। अज्ञान से भय उत्पन्न होता है, सब प्राणियो के ससार-भ्रमण का मूल कारण अज्ञान ही है।

□अज्ञान की अवस्था मे सर्वस्व खो जाने पर भी वेदना सोई रहती है।

□संसार में नीति, अदृष्ट वेद, शास्त्र और ब्रह्म इन सबके पंडित मिल सकते हैं। परन्तु अपने अज्ञान को जानने वाले विरले ही होते हैं।

□यदि अपने अज्ञान को मिटाना है तो ज्ञानियों से ज्ञान सीखो।

□अशिक्षित रहने की अपेक्षा पैदा न होना या पैदा होकर के मर जाना अच्छा है, क्योंकि अज्ञान विपत्तियों का मूल है।

□अपनी विद्वत्ता पर अभिमान करना सबसे बड़ा अज्ञान है।

□मूर्ख लोग ही अज्ञान के अन्धकार में भटकते रहते हैं।

□हजारों मूर्खों की संगति की अपेक्षा एक ज्ञानी का सहवास अच्छा है।

□अज्ञान चिकनी मिट्टी के समान है। इस पर पैर रखते ही मानव फिसल जाता है। जो व्यक्ति अज्ञान से अपने को बचा नहीं सकता वह मोह माया के दलदल में अवश्य फंस जाता है।

अज्ञानता :

□अपनी अज्ञानता का आभास ही बुद्धिमत्ता के मन्दिर का प्रथम सोपान है।

□अज्ञान की सबसे बड़ी सम्पत्ति होती है मौन और जब वह इस रहस्य को जान जाता है, तब वह अज्ञान नहीं रहता।

अज्ञानी :

□जो ज्ञान के अनुसार आचरण नहीं करता है, वह ज्ञानी भी वस्तुतः अज्ञानी ही है।

अज्ञानी का ससार .

□जागते हुए को रात लम्बी होती है, थके हुए को एक योजन चलना भी बहुत लम्बा होता है, वैसे ही सद्धर्म को नही जानने वाले अज्ञानी का ससार बहुत दीर्घ होता है ।

अज्ञानी साधक :

□अन्धा कितना ही बहादुर हो, शत्रु सेना को पराजित नही कर सकता । इसी प्रकार अज्ञानी साधक भी अपने विकारो को जीत नही सकता ।

अच्छी फसल :

□श्रम, विश्वास व साहस—इन तीनो से जीवन क्षेत्र मे अच्छी फसल पैदा होती है ।

अच्छी बात :

□अच्छी बात कही से भी मिलती हो, उसे ध्यान से ग्रहण करो । मोती के कीचड मे पड जाने से मोती के मूल्य मे कभी कमी नही आ सकती ।

अति

□अति भोग से रोग, अतिलोभ से नाश और अतिहास्य से तिरस्कार होता है । अति का सदा त्याग करना चाहिए "अतिसर्वत्र वर्जयेत् ।"

□अधिक हर्ष और अधिक उन्नति के बाद ही अतिदु ख और

□अति सुन्दरता के कारण सीता हरी गई, अति गर्व से रावण मारा गया। अति दान के कारण बलि को बंधना पड़ा, अति को सब जगह छोड़ देना चाहिए।

अतिथि :

□अतिथि समाज का एक प्रतिनिधि है। अतिथि के रूप में समाज हम से सेवा मांग रहा है—हमारी यह भावना होनी चाहिए।

□वह व्यक्ति घर के कीर्ति और यश को खा जाता है, जो अतिथि से पहले भोजन करता है।

□'अतिथिदेव' का अर्थ है समाज-देवता। समाज अव्यक्त है, अतिथि व्यक्त है। अतिथि समाज की व्यक्त मूर्ति है।

अतिथि-सत्कार :

□अतिथि के साथ सच्चे और हार्दिक स्वागत में वह शक्ति है कि जो साधारण से साधारण भोजन को अमृत और देवताओं का भोजन बना देती है।

□सच्ची मित्रता के नियम इस क्रम से सूचित होते हैं—आनेवाले का स्वागत करना, जाने वाले को हर्ष से विदा करना।

□जो मनुष्य योग्य अतिथि का प्रसन्नतापूर्वक स्वागत करता है, उसके घर में निवास करने से लक्ष्मी को आह्लाद मिलता है।

□मैं क्षुधापीड़ित था और तुमने मुझे खाद्यप्रदान किया, मैं पिपासा-कुल था और तुमने मुझे पेय प्रदान किया; मैं एक अजनबी था, तुमने मुझे आश्रय प्रदान किया।

अतिमात्रा

☐भोग की अतिमात्रा एव वाणी का अति विलास दोनो मृत्यु के कारण है। अर्थात् दोनो के अति उपयोग से प्राणशक्ति का ह्रास होता है।

अत्याचार :

☐समस्त अत्याचार क्रूरता एव दुर्बलताओ से उत्पन्न होते है।

☐अनाचार और अत्याचार को चुपचाप सिर झुकाकर वे ही सहन करते हैं जिनमे नैतिकता और चरित्र बल का अभाव होता है।

अत्याचारी :

☐जो अत्याचारी हैं उनका सोते रहना अच्छा है, सच तो यह है कि उसके जीवन से उसका मरण ही अच्छा है।

☐अत्याचारी से वढकर अभागा व्यक्ति दूसरा नही, क्योकि विपत्ति के समय उसका मित्र या स्वजन कोई नही होता।

अतृप्तता :

☐पतिंगे की नक्षत्र के लिए इच्छा, रात्रि को दिवस के प्रति और अपने दु ख से एक अज्ञात सुख की कामना—यही तो जीवन की चिर अतृप्त इच्छा है।

अदृष्ट :

☐"सहज मिले सो दूध बराबर है" इस कहावत के अनुसार जो अनायास कार्य वन जाता है, वह सही होता है। वहा मनुष्य के

बुद्धिबल का कार्य न होकर अदृष्ट शक्ति का ही कार्य समझना चाहिए।

अधर्म :

□ जैसे वृद्धावस्था सुन्दर रूप का नाश करती है, उसी प्रकार अधर्म से लक्ष्मी का नाश हो जाता है।

अधिकार :

□ संसार की अच्छी वस्तुओं का नाश करने के लिए ही शूरों को अधिकार मिलता है।

□ अधिकार जताने से अधिकार सिद्ध नहीं हो जाता।

□ अधिकार विनाशकारी प्लेग के सदृश है। यह जिसे छूता है, उसे ही भ्रष्ट कर देता है।

□ अधिकारों की भी सीमा होती है और शासन का समय। सीमा लांघने के बाद वह अधिकार न रहकर तानाशाही बन जाता है। समय लांघने के बाद शासन अत्याचार की भयानकता बन जाता है।

□ समाज में सबसे बड़ा अधिकार सेवा और त्याग से मिलता है।

अध्ययन :

□ जितना भी हम अध्ययन करते हैं, उतना ही हमको अपने अज्ञान का आभास होता जाता है।

□ मनुष्यमात्र में कुत्सित ऐसा कोई दोष नहीं है, जिसका प्रतिकार उचित अभ्यास के द्वारा न हो सकता हो। शारीरिक व्याधि दूर

करने के लिए जैसे अनेक प्रकार के व्यायाम है, वैसे ही मानसिक रुकावटो को दूर करने के लिए अनेक शास्त्रो का अध्ययन है।

□मूर्ख मनुष्य अध्ययन का तिरस्कार करते है। सरल मनुष्य उसकी प्रशसा करते है और ज्ञानी पुरुष उसका जीवन निर्माण मे उपयोग करते है।

□सद्ग्रन्थ इस लोक के चिन्तामणि है। उनके अध्ययन से सब कुचिन्ताएँ मिट जाती है। सशय पिशाच भाग जाते है और मन मे सद्भाव जाग्रत होकर परम शान्ति प्राप्त होती है।

□पढने मे सस्ता कोई मनोरजन नही है, न कोई खुशी उतनी स्थायी है।

□पढना सब जानते हैं, पर क्या पढना चाहिए, यह कोई विरला ही जानता है।

□प्रकृति की अपेक्षा अध्ययन के द्वारा अधिक व्यक्ति महान बने है।

□अध्ययन के द्वारा ज्ञान होता है, चित्त की एकाग्रता होती है, मुमुक्षु धर्म मे स्थिर होता है और दूसरे को स्थिर करता है, तथा अनेक प्रकार के श्रुत का अध्ययन कर श्रुत-समाधि मे रत हो जाता है।

□मुझे श्रुत का ज्ञान प्राप्त होगा, मैं एकाग्रचित्त होऊँगा, मैं आत्मा को धर्म मे स्थापित करूँगा, तथा धर्म मे स्थिर होकर

दूसरे को उसमें स्थिर करूँगा"—साधक को इसलिए अध्ययन करना चाहिए ।

□हमने जो कुछ पढ़ा है, उसपर विचार करें, उसे हजम करें और उसे अपने जीवन का अंग बना लें ।

अध्यात्म की ओर :

□विज्ञान हमें गति दे सकता है दिशा व दिग्दर्शन नहीं करा सकता । हाथ में अनूठी शक्ति दे सकता है, विवेक नहीं । दिशा-विवेक का ज्ञान लेना है तो हमें अध्यात्म की ओर प्रवृत्त होना पड़ेगा ।

अध्यात्मवादी :

□ज्ञानी—अध्यात्मवादी मानव को सतत जागृत रहना चाहिए, क्योंकि उसके व्यवहार की छाप दुनिया पर पड़ती है ।

अनर्थ :

□यौवन, धन-सम्पत्ति, प्रभुता और अविवेक—इनमें से प्रत्येक अनर्थ के कारण हैं, जहाँ चारों हों, वहाँ क्या कहना ?

अनर्थों का मूल कारण :

□अश्रद्धा से अन्तःकरण की विवेक शक्ति नष्ट होती है और अविवेक ही सब अनर्थों का मूल कारण है ।

अनासक्ति :

□अनासक्त व्यक्ति कर्म करता हुआ भी कर्म का बन्धन नहीं करता ।

अनियमितता :

☐कार्य की अधिकता से मनुष्य नही मरता, किन्तु कार्य की अनियमितता से मनुष्य मौत का शिकार हो जाता है।

अनिर्वचनीय :

☐शब्द समूह के जाल मे सत्य का समावेश नही होने के कारण वह अनिर्वचनीय है।

अनुभव :

☐उन्नति का श्रेष्ठ पाठ—अनुभव है।

☐सकेतो के आधार पर हम स्थान का स्वरूप नही जान सकते, प्रत्यक्ष बतलाने पर ही जान सकते है।

अनुमोदना :

☐जिस प्रकार तपस्वी तप के द्वारा कर्मो को धुन डालता हैं, वैसे ही तप का अनुमोदन करनेवाला भी।

अनुवशिक :

☐कवि की सतान कवि ही होती है, जो व्यक्ति मानवता का आदर करता है उसकी सन्तान भी मानवता की कद्रदान होती है। इन्सान की औलाद इन्सान बनेगा—कवि का यह कथन कितना सुन्दर है।

अनुस्रोत और प्रतिस्रोत :

☐जन साधारण को अनुस्रोत मे सुख की अनुभूति होती है, किन्तु जो सुविहित साधु है, उनकी यात्रा (इन्द्रियविजय) प्रतिस्रोत

होता है। अनुस्रोत संसार है—जन्म-मरण की परम्परा है। और प्रतिस्रोत उसका उतार है—जन्म मरण का पार पाना है।

अनेकांत :

□ अनेकान्त एक टकसाल के समान है, जहाँ सत्य के भिन्न-भिन्न अंश एक साँचे में ढल कर पूर्ण सत्य का आकार पाते हैं।

अन्याय :

□ अपनी भूल पर उपेक्षा करना, या जानेदो कहकर नजर-अंदाज करना अपने साथ अपनी ही ओर से किया जाने वाला सबसे बड़ा धोखा और अन्याय है।

अन्त :

□ सभी संग्रहों का अन्त क्षय है, बहुत ऊँचे चढ़ने का अन्त नीचे गिरना है। संयोग का अन्त वियोग है और जीवन का अन्त मरण है।

अन्तःकरण :

□ ईश्वर का मानव से सम्पर्क-स्थान ही अन्तःकरण है।

□ मैले शीशे में सूर्य की किरणों का प्रतिबिम्ब नहीं पड़ता। इसी प्रकार जिसका अन्तःकरण मलिन और अपवित्र है, उसके हृदय में ईश्वर के प्रकाश का प्रतिबिम्ब नहीं पड़ सकता।

□ मानव का अन्तःकरण ही ईश्वर की वाणी है।

□ कायरता पूछती है—क्या यह भय रहित है? औचित्य पूछता

है—क्या यह व्यावहारिक है? अहकार पूछता है—क्या यह लोक-प्रिय है? परन्तु अन्त करण पूछता है—क्या यह न्यायोचित है?

□अन्त करण न्याय का कक्ष है।

□अत.करण जब प्रेमानुभूति से प्लावित हो जाता है, तभी जीवन की गति सरल बन जाती है।

□जैसे अस्थिर जल मे प्रतिविम्ब दिखलाई नही पडता, उसी प्रकार मलिन और अस्थिर चित्त मे परमात्मा का प्रतिविम्ब नही पडता।

अन्त'करण शुद्धि

□जैसे कपडे को साफ करने के लिए साबुन, सोडा आदि अनेक वस्तुएँ है, इसी प्रकार अन्त करण को शुद्ध करने के लिए कर्म, भक्ति, ज्ञान, जप, तप आदि अनेक साधन है।

□केवल अनासक्त कर्मयोग की साधना द्वारा अत करण की शुद्धि हो कर अपने आप ही परमात्मा के स्वरूप का यथार्थ ज्ञान हो जाता है।

अन्तर :

□शक्ति और भोग की अनुकूलता होने पर भी उसका त्याग करने वाला तथा उसके अभाव मे त्याग करने वाले मे महान अन्तर है।

□ज्ञान पूर्वक की गई तपस्या मे और अन्ध परम्परा से गतानु-

सात्विक में की गई तपस्या में जमीन और आसमान जितना अन्तर है।

☐एक मकान धूल से भरा है तो दूसरा शक्कर से। अवश्य ही दोनों की समान हैं। जगह दोनों ने घेर रखी है। परन्तु एक की इज्जत है तो दूसरे की बेइज्जत। मानव के मन में सद्गुण रूपी शक्कर भी है तो दुर्गुणरूपी धूल भी। किन्तु दोनों का परिवेष्टन दुनियाँ की नजरों में चढ़ने गिरने का कारण बन जाता है।

☐बुद्धिमान बोलने के पहले तोलता है। मूर्ख बोलने के बाद।

अन्तर की पहचान :

☐मनुष्य और पशु में क्या अन्तर है? इसका सम्पूर्ण विचार कर जो अपने आप को श्रेष्ठ बनाता है, वह श्रेष्ठ स्थान को प्राप्त करता है।

अन्तर दीप :

☐अपने अन्तर में दीप प्रज्वलित करो, सारा संसार तुम्हारे प्रकाश से प्रकाशित होगा।

अन्तरअवलोकन :

☐जरा अन्तरअवलोकन करोगे तो तुम्हारी आत्मा में ही अखूट खजाना नजर आयेगा।

अन्धकार :

☐अरिहन्त का वियोग होने पर, अरिहन्त प्रणीत धर्म का विच्छेद होने पर, चौदह पूर्व का ज्ञान विच्छेद होने पर, भारत में अन्धकार

होता है। तथा अग्नि का नाश होने पर द्रव्य मे अन्धकार होता है।

आरोह तमसो ज्योतिः—

□अन्धकार से निकल कर प्रकाश की ओर बढो।

□जुगनू तभी चमकता है जब तक उडता है, यही हाल मन का है। जब हम रुक जाते है तो अन्धकार मे पड जाते है।

तमसो मा ज्योतिर्गमय'—

□मुझे अन्धकार से प्रकाश की ओर ले चलो।

अन्धकार और अहकार :

□जैसे अन्धकार में हमे कोई वस्तु दृष्टिगोचर नही होती, वैसे अहकार मे मानव को हिताहित का पथ दृष्टि गोचर नही होता।

अन्धकार और प्रकाश :

□राग अन्धकार है और त्याग प्रकाश है।

अन्धा :

□अन्धा वह नही है, जिसकी आंखे फूट गई है, वरन् वह है जो अपने दोष छिपाता है।

□जन्म से अन्धे नही देखते, काम से जो अन्धा हो रहा है उसको सूझता नही। मदोन्मत्त किसी को देखते नही, स्वार्थी मनुष्य दोषो को नहीं देखता।

अन्धापन :

□ अन्धकार प्रकाश की ओर चलता है, परन्तु अन्धापन मृत्यु की ओर।

अन्नदान :

□ भूख से पीड़ित मनुष्य को भोजन के लिए अन्न अवश्य देना चाहिए, उसको देने से महान पुण्य होता है तथा दाता मनुष्य सदा अमृत का पान करता है।

अन्याय :

□ अत्याचार सहन करने की अपेक्षा अत्याचारी बनना अधिक निन्दनीय है।

अन्यायी :

□ अन्यायी और अत्याचारी की करतूतें मनुष्यता के नाम खुली चुनौती है, जिसे वीर पुरुषों को स्वीकार करना ही चाहिए।

अपनत्व :

□ सबसे बड़ा भार अपनत्व का होना है, जहाँ अपनत्व है वहीं चिन्ता और दुःख है। सागर और गागर का पानी इसके प्रत्यक्ष उदाहरण है।

अपना और पराया :

□ संसार में अपना-पराया कोई भी नहीं। जो किसी को अपना समझता है, वही अपना है, और जो पराया समझता है, वह अपना होने पर भी पराया है।

अपनी देखे :

☐अपने पैरो मे काटा चुभा तो सारी पृथ्वी को चमडे से मढने की अपेक्षा अपने पावो मे जूता पहन लेना श्रेष्ठ है। सारा ससार सत्यवादी बने यह हमारे वश की बात नही है। हम सत्यवादी बने यह हो सकता है। हम ससार की पीडा से निर्बल बन रहे है, कितनी मूर्खता भरी बात है ?

अपनी पहचान :

☐जिसने आत्मा को जान लिया उसने परमात्मा को जान लिया। आत्मज्ञान ही परमात्म ज्ञान है। आगम वाक्य है—

"जे एग जाणइ, से सव्व जाणइ"

—जो एक को जानता है वह सबको जानता है। "यस्मिन् विज्ञाते सर्वमिद विज्ञात भवति" जिसको जान लेने पर सब कुछ जान लिया जाता है।

अपनी बडाई :

☐अपने मुँह मियामिट्ठू बनना निम्नस्तर के व्यक्तियो का काम है।

अपने आप बढ जाता है :

☐जल मे तैल स्वभाव मे फैल जाता है, दुष्ट मनुष्य के पास गई हुई गुप्तबात अपने आप फैल जाती है। सुपात्र को दिया हुआ दान

स्वयं वृद्धि को प्राप्त होता है और बुद्धिमानों का आत्मज्ञान अपने आप बढ़ता जाता है।

अपने आप को सुधारो :

□यदि तुम चाहते हो कि संसार सुधर जाय, तो तुम संसार को सुधारने के फेर में न पड़ो। इसका सबसे सरल उपाय तो यही है कि तुम अपने आप को सुधारो।

अपमान :

□अपमान का भय कानून के भय से किसी तरह कम क्रियाशील नहीं होता।

□हम दूसरों द्वारा अपमानित होने पर बहुधा कुपित हो जाते हैं, किन्तु अपने द्वारा होने पर नहीं। दूसरों द्वारा अपमानित होना उतना हानिप्रद नहीं है, जितना कि अपने द्वारा।

अपराध :

□अत्याचारों का सहना भी अपराध है, अन्याय करने वालों की उपेक्षा करना अन्याय पीड़ितों पर अत्याचार करना है।

□सबसे पहला अपराधी वह है जो अपराध करने देता है, दूसरा अपराधी वह है जो अपराध करता है।

अपराधी :

□अन्याय सहनेवाला भी अपराधी होता है। यदि वह न सहा जाय तो फिर कोई किसी से अन्याय पूर्ण व्यवहार कर ही नहीं सकेगा।

☐अपराधी अपने अपराध को छिपाने का कितना ही प्रयत्न क्यो नही करे, किन्तु एक न एक दिन उसका अपराध प्रकट हो ही जायगा ।

अपराधी को भूलो :

☐किसी के अपराध को याद मत करो । इससे हमारा ही मन दूषित हो जाता है । अपराधी का इसमे कुछ भी अनिष्ट नही होता । जो दूसरे के अपराध को भूलना जानते है, वे महान होते है, शत्रु को मित्र बनाने की कला मे कुशल होते है ।

☐कोई लेने के बाद भी कृतघ्न होता है तो यह उसका अपराध है, किन्तु यदि मै नही देता हूँ तो यह मेरा अपराध है ।

अपरिग्रह :

☐सब जीवो के त्राता भ० महावीर ने वस्त्र आदि को परिग्रह नही कहा है, मूर्छा को परिग्रह कहा है ।

अप्रमाद :

☐मद्य, विषय, कषाय, निद्रा, और विकथा यह पांच प्रकार का प्रमाद है । इससे निवृत्त होना ही अप्रमाद है ।

अबन्ध :

☐जो सब जीवो को आत्मवत् मानता है, जो सब जीवो को सम्यक्दृष्टि से देखता है, जो आश्रव का निरोध कर चुका है और जो दान्त है, उसको पाप-कर्म का बन्धन नही होता ।

अभय :

☐धन में, परिवार में, शरीर में अपनापन हटा दे तो भय कहाँ ? "तेन त्यक्तेन भुञ्जीथ"—यह भय की रामबाण औषधि है। धन, सम्पत्ति पर से ममत्व हटाना ही अपने आपको भय से मुक्त करना है।

अभयदान :

☐अभय का अर्थ है बाहरी भय से मुक्ति। मृत्यु का भय, धन दौलत के अपहरण का भय, आजीविका का भय, रोग का भय, शस्त्रप्रहार का भय—इन आत्मघातक भयों से मुक्ति दिलाना ही अभयदान है।

अभिमान

☐कोयल मधुर आम्ररस का पान करके भी अभिमान नहीं करती किन्तु मेंढक कीचड़ का पानी पीकर भी टर्राने लगता है।

☐किसी अवस्था में अपनी शक्ति पर अभिमान मत कर, क्योंकि संसार इन्द्र धनुष्य की तरह अपना रंग बदलता रहता है।

☐गर्व ने देवदूतों को भी नष्ट कर दिया।

अभेदद्रष्टा :

☐जिसकी दृष्टि शरीर और इन्द्रिय से परे आत्मा को परमता जानती है, वह अभेदद्रष्टा होता है।

अभ्युदय :

☐जीवन में भान, जब अपनी शुभ और अशुभ—दोनों वृत्तियों से

ऊपर उठकर शुद्धभाव मे परिणति पा लेते है, वही से वीतरागता का अभ्युदय होता है।

अमर

☐नीति-परायण व्यक्ति सदा अमर रहता है। और अनीति का आचरण करने वाला जीवित भी मरा हुआ है।

अमरत्व

☐मनुष्य इसी जन्म मे परिपूर्ण हो सकता है। सर्वसग परित्याग के योग से ही मनुष्य अमरत्व तक पहुँच सकता है।

☐अमरत्व की भावना ही मनुष्य के जीवन को सौदर्य तथा माधुर्य से पूर्ण बनाती है। यह भौतिक स्वर्ग या उस पार का बहिस्त, एक ही भावना है। चिर-सुख की इच्छा ही उनमे पाई जाती है।

☐विना अमरत्व की भावना से प्रेरित हुए आज तक किसी ने अपने देश के लिए धर्म के लिए अपनी प्राणो का उत्सर्ग नही किया।

अमीर और फकीर :

☐सब से बडा अमीर वह है जो गरीबो का दुख दूर करता है और सबसे बडा फकीर वह है जो अपने गुजारे के लिए अमीरो का मुँह नही देखता।

अमृत :

☐राग, द्वेष और मोह का क्षय होना ही अमृत है।

☐वृद्धों या बड़ों की वाणी में शास्त्र और अनुभव का मिश्रण होता है। इन दोनों का मिश्रण ही अमृत है।

अमृत की अपेक्षा अनुभव श्रेष्ठ है

☐सेर अमृत की अपेक्षा अनुभव का एक कण श्रेष्ठ है। अमृत मात्र एक व्यक्ति के जीवन की रक्षा कर सकता है, किन्तु अनुभव का एक कण लाखों व्यक्तियों को सुखी बना सकता है।

अमोघ औषधि

☐दुःख को दूर करने की एक ही अमोघ औषधि है-मन में दुःखों की चिन्ता न करना।

अवलोकनीय

☐रूप को नहीं, गुण को देखना चाहिए। कुल को नहीं, शील को देखना चाहिए। अध्ययन को नहीं, प्रतिभा को देखना चाहिए। भाषण को नहीं, आचरण को देखना चाहिए। चातुर्य को नहीं, सहनशीलता को देखना चाहिए। वय को बाह्य क्रिया को नहीं, दशा को देखना चाहिए।

अवश्यंभावी

☐यदि मानव सिंह के सामने जायेगा तो अवश्य ही काल-कवलित होगा। विषय, कषाय, पाप, दुष्कर्म रूप सिंह के सामने जायेगा तो आत्मा का पतन अवश्यंभावी है।

अवसर :

☐दीप के बुझ जाने पर तेल का दान किस काम का ?

☐वस्तुस्थिति को जानते हुए भी विना समय देखे बोलना मूर्खता है। अवसर आने पर भी गम्भीरता रखना बुद्धिमत्ता है।

☐बुराई करने के अवसर तो दिन मे सौ वार आते है, पर भलाई का अवसर वर्ष मे एक वार ही आता है।

☐सफलता को खो देने का निश्चित तरीका अवसर को खो देना है।

☐अवसर के डके दुवारा नही वजते।

☐कई लोग असाधारण अवसरो की वाट देखा करते हैं, किन्तु वास्तव मे कोई भी अवसर छोटा या वडा नही है। छोटे से छोटे अवसर का उपयोग करने से, अपनी बुद्धि को उसमे भिडा देने से वही छोटा अवसर वडा हो जाता है।

☐ऐसा कोई भी व्यक्ति ससार मे नही है, जिसके पास एक वार भाग्योदय का अवसर न आता हो, परन्तु जव वह देखता है कि वह व्यक्ति उसका स्वागत करने के लिए तैयार नही है, तो वह उलटे पैरो लौट जाता है।

☐आज का अवसर घूम कर खो दो, कल भी वही वात होगी और फिर अधिक सुस्ती आयेगी।

अविनीत

☐जिस प्रकार सडे कानो वाली कुतिया सर्वत्र अनादर व दुत्कार को प्राप्त होती है। उसी प्रकार अविनयी पुरुष सर्वत्र अनादर व तिरस्कार को प्राप्त होते है।

अविरोधी

□अपनी अपनी भूमिका के योग्य विहित अनुष्ठानरूप धर्म, स्वच्छ आशय से प्रयुक्त अर्थ, विस्रम्भयुक्त—मर्यादानुकूल वैवाहिक नियत्रण से स्वीकृत काम, जिनवाणी के अनुसार ये परस्पर अविरोधी हैं। अर्थात् इस प्रकार—धर्म, अर्थ और काम में कोई विरोध नहीं है।

अविश्वसनीय

□काया, माया और छाया ये तीनों अविश्वसनीय हैं।

अविश्वास

□अविश्वास धीमी आत्महत्या है।

□अविश्वासी आदमी ईश्वर के पास मन और प्राण को गिरवी रखता है और कुछ दिनों के बाद लौटा लेता है, किन्तु पूर्ण विश्वासी अपने को सम्पूर्ण रूप से ईश्वर के हवाले कर देता है।

असन्तोष

□असन्तुष्ट व्यक्ति के लिए सभी कर्तव्य नीरस होते हैं। उसे तो कभी भी किसी वस्तु में सन्तोष नहीं होता, फलस्वरूप उसका जीवन असफल होना स्वाभाविक है।

असम्भव :

□हर अच्छा काम पहले असम्भव लगता है।

असत्य

☐असत्य लम्बे समय तक नही चल सकता । जब तक दीप प्रकाशित नही होता तब तक ही अन्धकार का साम्राज्य रहता है ।

☐थोडा सा असत्य भी जीवन को बरबाद कर देता है । जैसे दूध मे जहर की एक बूंद ।

☐जो जान-बूझकर झूठ बोलने मे लज्जा का अनुभव नही करता उसके लिए कोई भी पाप अकरणीय नही ।

☐क्रोध से क्षुब्ध हुए व्यक्ति का सत्य भाषण भी असत्य ही है ।

☐दो काली वस्तुओ से एक सफेद वस्तु नही बन सकती । निंदा का जबाब निन्दा से, गाली का जबाब गाली से या हिंसा का जबाब हिंसा से देने से उनकी वृद्धि होती है ।

☐असत्य भाषण करने वाले को यह दण्ड नही कि लोग उसकी बातो का विश्वास न करे, किन्तु उसका यही दण्ड उसे मिलता है कि वह स्वय किसी का विश्वास नही करता ।

असत्यवादी

☐असत्यवादी हमेशा मित्र, यश व पुण्य से वंचित रहता है ।

असत्याचरण

☐प्रत्येक असत्याचरण समाज के स्वास्थ्य पर आघात है ।

असफलता

☐असफलता निराशा का सूत्र कभी नही है, अपितु वह तो नई प्रेरणा है ।

□असफलता का प्रधान कारण प्रायः धनाभाव नहीं, अपितु शक्ति सामर्थ्य और आत्मबल का अभाव होना है।

असम्भव

□असम्भव की कल्पना मत करो। पत्थर से पानी निचोड़ने की कल्पना मूर्खता है।

असाध्यरोग

□जो अपनी मूर्खता को जानता है, वह कभी न कभी समय आने पर धीरे-धीरे सुधर जाता है। परन्तु जो मूर्ख अपने को बुद्धिमान समझता है उसका रोग असाध्य है।

अस्पृश्यता

□मनुष्य के साथ प्रेम करने का ही पाठ शास्त्रों ने बताया है घृणा करना तो पाप है। छुआछूत धर्म के लिए कलंक है।

□मनुष्य जन्म से ही न तो मस्तक पर तिलक लगाकर आता है, न यज्ञोपवीत लेकर। जो सत्कार्य करता है वह द्विज है, और जो कुकर्म करता है वह नीच।

□अस्पृश्यता भारतवासियों पर कलंक है। इस कलंक को हमें 'सत्वेषु मैत्री' की भावना से धो डालना चाहिए।

□शरीर किसी का भी हो, स्वभावतः गन्दगी की गठरी है, और आत्मा तो सर्वत्र एक-सा शुद्ध व निर्मल है। ऐसी अवस्था में अस्पृश्यता कैसी और किसके लिए?

अह

□मैं कौन हूँ ? इसका तूने विचार किया ? मैं आत्मस्वरूप ईश्वरीय तेज से परिपूर्ण अपने आप मे स्वय अपना भाग्य विधाता हूँ । मैं किसी दूसरे के हाथ का खिलौना नही बन सकता । अपने आप मे मैं पूर्ण हूँ ।

अहम्

□ईश्वर और हमारे बीच मात्र ढाई अक्षर का ही अन्तर है । इन ढाई अक्षरो की यदि पहचान दू तो वह है 'अहम्' ।

अहकार

□मनुष्य जितना छोटा होता है उसका अहकार उतना ही बडा होता है ।

□दम्भ का अन्त सदैव अहकार मे होता है और अहकारी आत्मा सदैव पतित होती है ।

□नाश के पूर्व व्यक्ति अहकारी हो जाता है, किंतु सम्मान सदैव व्यक्ति को नम्रता प्रदान करता है ।

□अहकार को छोडने वाला व्यक्ति ही मोक्ष सुख को प्राप्त कर सकता है ।

□जहाँ सुगन्ध है वहाँ दुर्गन्ध नही रह सकती । जहाँ पुण्य है वहाँ पाप नही रह सकता । जिस हृदय मे प्रभु का निवास है वहाँ अहकार नही रह सकता ।

☐अहंकार रूपी ज्वर से पीड़ित व्यक्ति को हितरूपी मधुर भोजन कड़वा लगता है।

अहंकारी

☐अहंकारी का अहंकार सदा स्थायी नहीं रहता। उसका धन, यौवन, रूप, यश और अधिकार शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

अहिंसा

☐अहिंसा, अपरिग्रह की माता है। जिस अहिंसा की साधना में अपरिग्रह भाव का जन्म नहीं होता, जनता का शोषण बन्द नहीं होता, वह अहिंसा कच्ची है।

☐जो निज के दुःख की तरह पर के दुःख की अनुभूति करता है, निज के सुख में पर के सुख की तुलना करता है, जो समझता है, जानता है कि जैसे मुझे सुख-दुःख होता है, वैसे ही अन्य को भी होता है, वही धर्म को जानता है।

☐सुख देने वाला सुखी होता है, दुःख देने वाला दुःखी। जीव की हिंसा न करना ही श्रेष्ठ धर्म और तप है।

☐सभी जीव जीना चाहते हैं मरना नहीं। इसलिए प्राण-वध को भयानक जानकर साधक उसका वर्जन करते हैं।

८७

आ
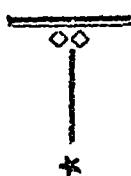
आचरण

□ दर्शनशास्त्र के दस ग्रन्थ लिखना आसान है, एक सिद्धान्त पर आचरण करना मुश्किल है।

□ उपदेशक श्रोता को जन-कल्याण-कारक, आत्मोद्धारक मार्ग बतला सकते हैं। विघ्न बतला कर बचने के उपाय भी बतला सकते हैं किन्तु स्वयं तो चल नहीं सकते। मार्गप्रदर्शक पथिक को घुमावदार कंटकाकीर्ण राजमार्ग संकेतों मे बतला देते हैं किन्तु चलना तो पथिकों को ही पड़ेगा। पथप्रदर्शक को नहीं।

□ मुट्ठी में बन्द मिश्री की डली से मिठास न देने की शिकायत नहीं कर सकते, हाँ मुँह मे डालने पर यदि उसमे मिठास न आये तो उसकी शिकायत ठीक है धर्म के सिद्धान्तों को पुस्तक मे बन्द

मत रखिये । उसे आचरण मे लाइये । आचरण में लाने पर भी यदि धर्म फल नहीं देता है तो उसकी शिकायत उचित है ।

□पवित्र महापुरुषो के आदर्श जीवन को सामने रख कर अपने मन, वचन और शरीर को उनके अनुसार चलने की आदत डालनी चाहिए ।

□उच्च विचार यदि कार्य में परिणत हो जाते हैं तो वे स्वर्ण बरसाने वाले बादल की तरह उपयोगी है । यदि विचार ,विचार ही रह जाते हैं तो वे सफेद बादल की तरह निरर्थक हैं ।

□मार्ग दिखलाना दीपक का कार्य है, लेकिन उस पर चलना मानव का कर्तव्य है । यही मार्ग दिखलाना गुरु का कर्तव्य है, लेकिन उसे अमल मे लाना व्यक्ति का कर्तव्य है ।

□जो सबके लिए हितकर, सुखकर व कल्याणप्रद हो, उसी का आचरण करना चाहिए ।

□सत्य व प्रिय बोलो, असत्य प्रिय मत बोलो । किसी के साथ वैर या शुष्कविवाद मत करो ।

□स्वजन से विरोध, बलवान से स्पर्धा, स्त्री, बालक, वृद्ध तथा मूर्ख से विवाद मत करो ।

□क्रोध को प्रेम से जीतो, बुराई को भलाई से जीतो, लोभ को सन्तोष से व असत्य को सत्य से जीतो ।

□दया के छोटे-छोटे कार्य, प्रेम के जरा-जरा से शब्द हमारे जीवन को स्वर्गीय बना देते हैं ।

☐आपत्तिग्रस्त कायर अपने भाग्य को दोप देता है। किंतु अपने पूर्व-कृत दुष्कर्मों को भूल जाता है।

आघात :

☐किसी भी तलवार का आघात इतना तीव्र नही होता जितना कि कर्कश जिह्वा का।

आत्मा :

☐ज्ञान का स्वामी दिव्य आत्मा ही विश्व का सम्राट् है।

आगे बढो

☐फूल चुनकर इकट्ठा करने के लिए मत ठहरो। आगे बढे चलो, तुम्हारे पथ मे निरन्तर फूल खिलते ही रहेगे।

आगे की ओर देखो

☐मेरी राय मानो, अपनी नाक के आगे न देखा करो। तुम्हे हमेशा मालूम होता रहेगा कि उसमे आगे भी कुछ है और वह ज्ञान तुम्हे आशा और आनन्द से मस्त रखेगा।

आग्रह :

☐स्वमति की जगह सुमति, तथा स्वपक्ष के स्थान पर सुपक्ष का आग्रह होना चाहिए।

आगम का सार

☐जैनशास्त्रो मे सिर्फ दो ही बात बताई गई है--मार्ग और मार्ग का फल।

आकांक्षा :

☐ यदि तुम सर्वोच्च शिखर पर पहुँचने के आकांक्षी हो, तो सबसे नीचे से चढ़ना शुरू करो।

☐ जो कुछ तुम इच्छा करते हो, यदि तुम वह कर नहीं सकते तो वही इच्छा करो जो तुम कर सकते हो।

आँख :

☐ आँखें शरीर का दीपक है। इसलिए यदि तुम्हारी आँखें स्थिर निर्विकार हैं तो तुम्हारा सारा शरीर प्रकाश से जगमगा उठेगा। यदि तुम्हारी आँखों में बुराई भरी है तो निश्चित तुम्हारे जीवन में अन्धकार का साम्राज्य फैल जायगा।

☐ अकेली आँख यह बतला सकती है कि हृदय में घृणा है या प्रेम।

आचार और विचार :

☐ आचार से विचार बनता है और विचार से आचार बनता है। दोनों में अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।

आचार-समाधि :

☐ मुनि जिस श्रद्धा से उत्तम प्रव्रज्या-दीक्षा के लिए घर से निकला उसी का अनुपालन करे। आचार सम्पन्न गुणों की आराधना में मन को लगाए रखे।

आचार्य :

☐ जो आचरण योग्य नियम बनाता है, वह आचार्य है।

☐जिस प्रकार दीपक स्वय प्रकाशमान होता हुआ अपने स्पर्श से अन्य सैकडो दीपक जला देता है, उसी प्रकार आचार्य स्वय ज्योति से प्रकाशित होते है एव दूसरो को प्रकाशमान करते है ।

आजादी :

☐आजादी की तडफ आत्मा का सगीत है ।

☐रत्नजटित स्वर्ण के पिंजरे मे रहने वाला और विविध भोजन खाने वाला तोता आजादी से वन के सूखे पत्ते खाना ज्यादा पसन्द करता है ।

मिले खुश्क कर रोटी तो आजाद रहकर।
बेखोफ जिल्लत हलवे से बेहतर ।

☐नीतिज्ञ व्यक्ति ही आजादी को दिल से चाहते है, शेप लोग स्वतन्त्रता नही, स्वच्छन्दता चाहते है ।

☐नेक आदमी ही आजादी को दिल से प्यार करते है, बाकी लोग स्वतन्त्रता नही, स्वच्छन्दता चाहते है ।

आजाद :

☐आजाद वही है, जिसने आत्मा को जीत लिया है शेष सब परतन्त्र है ।

☐गुलामी के हजारो वर्ष की अपेक्षा आजादी का एक क्षण अधिक आनददायक है ।

आज्ञा :

□ महापुरुषों की आज्ञा में तर्क वितर्क करने जैसी कोई वस्तु नहीं होती ।

आत्म-ज्ञान :

□ मनुष्य के व्यक्तित्व का सबसे बड़ा घटक तत्त्व है अपनी शक्तियों की जानकारी व उसमें दृढ़ आस्था । अपनी शक्ति की पूंजी को संजोइए व उसमें अपना व्यक्तित्व जगाकर संसार को प्रकाशित कीजिए ।

आत्मद्रष्टा :

□ आत्मद्रष्टा विचार करता है—"मैं तो शुद्ध ज्ञान, दर्शनस्वरूप, सदा काल अमूर्त सत्‌चित्‌ आनन्दस्वरूप एक शुद्ध शाश्वत तत्त्व हूँ परमाणु मात्र भी अन्य द्रव्य मेरा नहीं है ।"

आत्मप्रकाश :

□ हे मानव ! आत्मदीप (आप ही अपना प्रकाश) और स्वावलम्बी होकर विचरण कर, किसी दूसरे के भरोसे मत रह ।

आत्म-प्रशंसा :

□ जिन्हें कहीं से प्रशंसा नहीं मिलती वे आत्मप्रशंसा करते हैं ।

आत्मनिरीक्षण :

□ केवल दूसरों के द्वारा अपनी निन्दा सुन कर मनुष्य अपने को निन्दित न समझे, वह स्वयं आत्मनिरीक्षण करे । लोग तो निरंकुश होते हैं, जो चाहते कह देते हैं ।

□क्या मेरे प्रमाद (दोष-सेवन) को कोई दूसरा देखता है अथवा अपनी भूल को मैं स्वयं देख लेता हूँ? वह कौनसी स्खलना है जिसे मैं नहीं छोड रहा हूं? इसप्रकार सम्यक् प्रकार से आत्म-निरीक्षण करता हुआ साधक अनागत का प्रतिबन्ध न करे-असयम मे न बधे, फल की कामना न करे।

□दूसरे की त्रुटियो को नही देखना चाहिए, उसके कृत्य, अकृत्य के फेर मे नहीं पडना चाहिए। अपनी ही त्रुटियो का तथा कृत्य अकृत्य का विचार करना चाहिए।

आत्मरक्षा :

□जान मे, अजान मे कोई अधर्म कार्य कर बैठे तो अपनी आत्मा को इससे तुरन्त हटाले, फिर दूसरी बार वह कार्य न करे।

□सब इन्द्रियो को सुसमाहित कर आत्मा की सतत रक्षा करनी चाहिए। अरक्षित आत्मा जाति-पथ (जन्म-मरण) को प्राप्त होता है और सुरक्षित आत्मा सब दुःखो से मुक्त होता है।

आत्मविश्वास .

□आत्मविश्वास सफलता का मुख्य रहस्य है।

□आत्मविश्वास ही अशक्य को शक्य बना सकता है।

□आत्मविश्वास, आत्मज्ञान और आत्मसयम केवल यही तीन तत्त्व जीवन को परम शक्तिसम्पन्न बना देते हैं।

□आत्मविश्वास सिद्धि का प्रथम सोपान है।

आत्म-शक्ति :

☐ प्राणी जहां-जहां पर जो-जो भी प्राप्त करता है वह सभी ही अपनी आत्म शक्ति से लाभ करता है। किसी अन्य से उसे कुछ नही मिलता।

आत्मसम्मान :

☐ आत्मसम्मान की रक्षा हमारा सबसे पहला धर्म है। आत्मा की हत्या करके अगर स्वर्ग भी मिले तो वह नरक के समान है।

आत्म-स्वरूप:

☐ शुद्धोसि-बुद्धोसि निरञ्जनोसि,
संसार-माया-परिवर्जितोसि।

—वत्स ! तू शुद्ध है, बुद्ध है और निरंजनस्वरूप है। तू इस संसार की माया से बिलकुल दूर है। यह भारतीय संस्कृति का मूल नारा है।

आत्महत्या :

☐ आत्महत्या अनुचित है, क्योंकि निरपराध शरीर को मार डालने से क्या लाभ ? अपराध तो हमारे मन ने किया है, क्यों नही उसे मार डाला जाय। अपराध मन करे और दण्ड शरीर को दें यह कहां का न्याय ?

आत्मा :

☐ आत्मा ही अपना स्वर्ग और आत्मा ही अपना नरक है।

□आत्मा ही मेरा वन्धु है और आत्मा ही मेरा शत्रु है।

—अप्पा मित्तममित्त च।

□आत्मा ही सुख-दु ख का कर्त्ता और भोक्ता है। सदाचार मे प्रवृत्त आत्मा मित्र तुल्य है, और दुराचार मे प्रवृत्त होने पर वही शत्रु तुल्य है।

—अप्पा कत्ता विकत्ता य दुहाणय सुहाणय।

□जो आत्मा है वह विज्ञाता है और जो विज्ञाता है वह आत्मा ही है।

—आया नाणे विन्नाणे च।

□मित्र, शत्रु, मार्गप्रदर्शक, वुद्धिमान कोई और नही, वह तो तुम्हारी आत्मा ही है जो सतत तुम्हारे साथ रहती है।

□आत्मा तो स्वय शुद्ध, वुद्ध, सच्चिदानन्द ज्ञान, दर्शन चारित्र-मय है, जीव के समान जीव ही हो सकता है, जड पदार्थ नही।

—आत्मा वाऽरे द्रष्टव्य।
श्रोतव्यो, मन्तव्यो, निदिध्यामितव्य·।

□आत्मा का ही दर्शन करना चाहिए, आत्मा के सम्वन्ध मे सुनना चाहिए, मनन चिन्तन करना चाहिए, और आत्मा का ही निदिध्यासन-ध्यान करना चाहिए।

□आत्मा तीन प्रकार का है—परमात्मा, अन्तरात्मा, और वहिरात्मा।

□इन्द्रियगामि आसक्त बहिरात्मा है, और अन्तरंग में आत्मानुभव रूप आत्मसंकल्प अन्तरात्मा, आत्मा की परम शुद्ध अवस्था परमात्मा है।

आत्मा और सोना

□सोना और मिट्टी, दूध और मक्खन साथ रहते हैं, वैसे ही आत्मा अनादिकाल से देह के साथ रहता आया है। सोना और मिट्टी एक नहीं, किन्तु भिन्न-भिन्न हैं, वैसे ही आत्मा देह से भिन्न है। मिट्टी से स्वर्ण अलग किया जा सकता है, वैसे ही आत्मा को देह से अलग किया जा सकता है। देह विमुक्ति ही आत्मा की विमुक्ति है।

आत्मानुशासन :

□मैं एक हूँ, दूसरा मेरा कोई नहीं है, मैं भी अदृश्यमान किसी अन्य का नहीं हूँ। इस प्रकार अदीन मन से आत्मा का अनुशासन करो।

आत्मा से परमात्मा :

□पूजा, अर्चना, तीर्थस्नान, तीर्थजल प्राशन से आत्मा अमर नहीं बनता, किन्तु वासना पर विजय पाने से ही आत्मा परमात्मा बनता है।

आत्मीयता :

□आत्मीयता से भरी एक दृष्टि पीड़ित हृदय के लिए कुबेर के कोष से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।

आदत :

☐लोमडी अपनी खाल बदलती है, आदते नही ।

☐बुरी आदतो से हमारी क्षुद्रता का आभास मिलता है ।

☐आदतो को यदि रोका न जाए तो वे शीघ्र ही लत बन जाती है ।

आदमी :

☐जो कभी गिरा नही, वह आदमी नही, जो गिरकर उठा नही, वह भी आदमी नही ।

आदर्श-जीवन .

☐ जिन्दगी ऐसी बना जिन्दा रहे दिलशाद तू ।
जब न हो दुनिया मे तो दुनिया को आये याद तू ।

आदर्श-दान :

☐बिना दिखावट के उदारता और करुणा की भावना से अन्त -करण पूर्वक दिया गया अल्पदान भी महालाभ का कारण होता है ।

आदर्श-रहित

☐आदर्शविहीन मानव मल्लाह रहित जहाज है ।

आधार :

☐समुद्र मे से उत्पन्न हुए बुलबुलो का और पर्वत जितने बडे तरंगो का आधार तो महासागर स्वय ही है ।

आधारभूत तत्त्व :

□ शान्ति प्राप्त करने के लिए हमें धन दौलत को या सत्ता को प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं। शान्ति प्राप्त करने के लिए हमें संयम और सन्तोष की आवश्यकता है। क्योंकि शान्ति प्राप्त करने के ये ही आधारभूत तत्त्व हैं।

आधुनिक शिक्षा :

□ आधुनिक शिक्षा और संस्कृति संसार में सुशिक्षित समझे जाने वाले को भौतिक सुख की लालसा की ओर आकर्षित करती है, जिससे उनकी सच्चे आध्यात्मिक सुख की ओर दृष्टि नहीं जाती किन्तु जो अशिक्षित कहलाते हैं वे लोग जीवन के सनातन सत्यों को सहजता से समझ सकते हैं और जीवन का सन्तोष पा सकते हैं।

आध्यात्मिक ज्ञान :

□ जहरीले साप को मंत्रज्ञ ही पकड़ सकता है, साधारण व्यक्ति नहीं। मंत्र जानने वाला उसे गले में डाल देता है। इसी प्रकार जिसने आध्यात्मिक ज्ञान को आचरण में लाया है, उसे सांसारिक मोह, काम-विकार सता नहीं सकते।

आनन्द :

□ आनन्द का वृक्ष बुद्धि की अपेक्षा नीति की भूमि में अधिक फलता और फूलता है।

□ सच्चे आनन्द का आधार हमारे अन्तःकरण में ही है।

□ मन का आनन्द ज्ञान में और शरीर का आनन्द स्वास्थ्य में है।

□ केवल आध्यात्मिक जीवन में ही आनन्द है।

□ जब तक वासना की प्रबलता रहेगी तब तक प्रभु प्राप्ति का आनन्द नहीं मिल सकता।

□ संयम और त्याग के मार्ग से ही हम शान्ति और आनन्द तक पहुँच सकते हैं।

□ आनन्द तो अपने पास है। उसे दूसरों को देने से जो आनन्द मिलता है उसी का नाम परमानन्द है। जो शरीर की तृप्ति के लिये आनन्द दिया जाता है वह विषयानन्द है।

□ आत्मस्वरूप को नहीं समझना ही अज्ञानता है, आत्मा का ज्ञान ही आनन्द है।

□ आनन्द बाह्य परिस्थितियों पर नहीं, भीतरी परिस्थितियों पर निर्भर है।

□ अपने लिये जीना ही दुःख है।

□ दूसरों के लिए जीना ही सुख है।

□ जिस सीमा तक तुम दूसरों के लिये जीओगे, उसी सीमा तक आनन्द के निकट होंगे।

□ आनन्द सर्वोत्तम मदिरा है।

आनन्दी :

□ वह गम्भीर हृदय कितना भव्य है जो खुशी का [illegible] गम को अपनाता रहता है।

आनन्द का साधन :

□आनन्द प्राप्ति का महत्त्वपूर्ण साधन है—कार्यमग्न होना।

आपत्ति :

□आपत्तियों से बढ़ कर और कोई बड़ी शिक्षा नहीं है।

□सतत सफलता हमें संसार का केवल एक पक्ष दिखाती है, आपत्तियाँ उस चित्र का दूसरा पक्ष भी दर्शाती है।

आपत्ति और सम्पत्ति :

□आपत्ति 'मनुष्य' बनाती है और सम्पत्ति 'राक्षस'।

आर्त और रौद्रध्यान :

□विषय और उसके साधनों की प्राप्ति की इच्छा आर्तध्यान है और प्राप्त हुई वस्तुओं के रक्षण की बुद्धि रौद्रध्यान है।

आरोग्य :

□आत्मनिरीक्षण से मन का, मौन से वाणी का, कर्म से शरीर का दोष नष्ट हुए बिना आरोग्य नहीं मिलता।

आलसी :

□आलसी व्यक्ति बन्द हुए पानी के समान है, जो कि अपने आप बिगड़ने लगता है।

आलस्य :

□उन्नति का सबसे बड़ा शत्रु आलस्य है। आलस्य दरिद्रता का पुरस्कार है।

☐आलस्यो मनुष्याणां रिपु—आलस्य मनुष्य का शत्रु है।
☐जिसे काम मिला, सचमुच वही सुखी है। दुनिया मे एक ही दानव है, जिसका नाम है आलसी।
☐आलस्य दरिद्रता का ही दूसरा नाम है।
☐आलस्य की कब्र मे सब सद्गुण दफन हो जाते है।

आलुछाप :

☐अपने पूर्वजो—पूर्वपुरुषो की महिमा का गान गाने के सिवाय जिसकी स्वय की कोई हस्ती नही, वह पूरा हुआ आलुछाप मानव है।

आलोचना :

☐सर्वोत्तम आलोचना वह है, जो बाहर से अनुभव कराने के बदले लोगो को वही अनुभव भीतर मे करा देती है।
☐शेर शेर को भी मक्खियो से अपनी रक्षा करनी पड़ती है।
☐आलोचक प्राय वे ही व्यक्ति बनते है जो कला और साहित्य के क्षेत्र मे असफल रहते है।
☐जो साधक गुरुजनो के समक्ष मन के समस्त शल्यो को निकाल-निकाल कर आलोचना निंदा (आत्मनिंदा) करता है, उसकी आत्मा इसी प्रकार उज्ज्वल होती है जैसे अग्नि मे तपाया हुआ स्वर्ण।

आवरण :

□सत्य पर सौंदर्य का आवरण बिछा हुआ है। पारदर्शी चक्षु के द्वारा ही उस सत्य का दर्शन हो सकता है। घूंघट से पति-पत्नी का मुंह नही देख पाता। आवरण मे सत्य का वास्तविक स्वरूप प्रकट नही हो सकता।

□तुम्बे का स्वभाव पानी पर तैरने का है। यदि उस पर लोहे का बड़ा आवरण चढ़ा दिया जाय तो वह पानी मे डूब जायगा।

□आत्मा का स्वभाव भी ऊर्ध्व गमन का ही है, किन्तु कर्मों के भारी आवरण के कारण वह नीचे की ओर भटकता रहता है। ज्योंही आवरण हट जाता है आत्मा ऊर्ध्वगामी हो जाती है।

आवश्यकता :

□आवश्यकता दुर्बल को भी साहसी बना देती है।

आशा :

□आशा सर्वोत्कृष्ट प्रकाश है। निराशा घोर अन्धकार।

□निरर्थक आशा से बंधा मानव अपना हृदय सुखा डालता है और आशा की कड़ी टूटते ही वह झट से विदा हो जाता है।

□दो आशाओं से मुक्ति पाना कठिन है—एक लाभ की आशा और दूसरी जीवन की आशा।

□आशा एक ज्योति स्वरूप दीप स्तम्भ है, तो निराशा निविड़ अन्धकार। आशा धर्म का प्रवेश द्वार एवं दिव्योन्माद की जननी

है। कर्म मार्ग को मानने वाले व 'नैराश्य परम सुखम्' को मानने वाले भी आशा से मुक्त नही है।

आशा के पुष्प :

☐ निराशा की कब्र पर आशा के पुष्प चढायेंगे।

आशातना :

☐ आशीविप सर्प अत्यन्त क्रुद्ध होने पर भी 'जीवननाश' से अधिक क्या अहित कर सकता है ? किन्तु गुरु की अप्रसन्नता सम्यक्त्व का नाश कर देती है। अत गुरु की आशातना से मोक्ष नही मिलता।

आशा रखें :

☐ शानदार था भूत और भविष्यत् भी महान है।
अगर बनाये हम उसे, जो कि वर्तमान है।

आशावान :

☐ आशावान प्राणी प्रत्येक वस्तु का यथातथ्य रूप देखता है, उसकी पूर्णता मे विश्वास रखता है। निराशावादी उसी को एकागी दृष्टिकोण से खण्डित रूप मे देखता है। आशावादी बुद्धि के प्रकाश मे आगे बढता है। निराशावादी जडता मे ठोकरें खाता है। आशावादी ऐश्वर्य प्राप्ति का उत्साह रखता है। निराशावादी स्वय नरक कुण्ड मे गिर कर अन्य को भी उसी मे डूबने के लिए घसीटता है।

आश्चर्य :

□आश्चर्य है कि लोग जीवन बढ़ाना चाहते हैं, सुधारना नहीं।

□आश्चर्य है कि हम कार्य करने की शक्ति रखते हुए भी संशय-शीलता के कारण कार्य नहीं कर सकते। जिन कार्यों को हम नहीं कर सकते उनकी कल्पना कर सकते हैं।

□सबसे बड़ा आश्चर्य यही कि रोज बेशुमार लोग मरते चले जा रहे हैं, फिर भी जीने वालों को यह नहीं लगता कि एक रोज हमें भी मरना होगा।

□आश्चर्य है कि लोग जीवन को ज्यों-त्यों जीना चाहते हैं, पर उसको सुधारकर सुखमय बनाने की चेष्टा नहीं करते।

आश्रय :

□दुःखी आपत्तिग्रस्त, रोगी, दरिद्रजनों के लिए सन्त परम आश्रय है।

आसक्ति :

□आसक्ति का सब प्रकार से त्याग करना चाहिए। यदि सम्पूर्ण आसक्ति का त्याग न हो सके तो हमें सतत सन्तों की सेवा और उनके प्रवचन सुनने चाहिए। जिससे आसक्ति अपने आप नष्ट हो जायगी।

□आसक्ति के बन्धन यदि टूट जाये तो आप देखेंगे कि अपनी आत्मा में ही अमृत का झरना बह रहा है।

आसक्ति और अशक्ति '

☐आसक्ति मानसिक रोग है और अशक्ति शारीरिक । जीवन के विकास में ये दोनों बाधक है ।

आह :

☐दर्द-दिल की आह हजारो तीरो एव तलवारो से भी अधिक भयानक है ।

आहार '

☐जीने के लिए खाओ, खाने के लिए मत जीवो । क्योकि न तो आहार हमारे जीवन का व्यापार है और न इन्द्रिय सुख हमारे जीवन का आदर्श ।

आहो से आईना चमक उठेगा :

☐यदि बिल्ली किसी साफ स्थान पर गन्दगी छोड देती है तो उसे वह बुरा समझ कर मिट्टी मे ढक देती है । मगर मानव गन्दे काम करने के लिए आजाद होते हुए भी यह डर नहीं रखता कि लोग देखेंगे तो क्या कहेंगे । जग मे नाम बदनाम होगा । कयामत के दिनो यमराज के सन्मुख किस मुह से सामने जा सकेंगे । जिसे तू आदत समझता है, खराब काम समझता है वह दूसरे का नही, अपना ही किया हुआ है ।

००

इच्छा :

□ इच्छा बढ़ने से पाप बढ़ता है। इच्छा घटने से दुःख घटता है। इच्छा के दूर होने से पाप दूर हो जाते हैं, पाप दूर हो जाने से दुःख दूर हो जाते हैं।

□ इच्छा ही नरक है, सारे दुःखों का आगार! इच्छाओं को छोड़ना स्वर्ग प्राप्त करना है, जहाँ सब प्रकार के सुख साथी की प्रतीक्षा करते हैं।

इच्छाएँ :

□ बाद में उत्पन्न होने वाली सारी इच्छाओं की पूर्ति करने की अपेक्षा पहली इच्छा का दमन कर देना कहीं सरल और श्रेयस्कर है।

☐जीवन के दो स्थान ही दु खमय होते है—प्रथम तो इच्छाओ की पूर्ति हो जाना और द्वितीय इच्छाएँ अपूर्ण रहना ।

इच्छा पर निर्भर :

☐इस ससार रूपी खेत मे दोनो प्रकार के फल मिलते है—अमृतफल और विषफल, शूल और फूल स्वर्ण और पत्थर, मृत्यु और अमरत्व। इनमे से किसे स्वीकार करे—यह प्रत्येक की इच्छा पर निर्भर है ।

इतिहास :

☐मानव-इतिहास प्रधानरूप मे विचारो का इतिहास है ।

इन्द्रिय

☐एक ही इन्द्रिय के स्वच्छन्द विचरण से जब जीव सैकडो दु ख पाता है, तब जिसकी पाचो इन्द्रियाँ स्वच्छन्द है, उसका तो कहना ही क्या ?

इन्द्रिय-सयम :

☐पापो से बचने का सबसे श्रेष्ठ उपाय अपनी इन्द्रियो पर सयम करना है। जैसे—कछुआ शत्रु के प्रहार से बचने के लिए अपने अवयवों को सकुचित कर लेता है। वैसे ही साधक वासना-रूपी शत्रुओ से बचने के लिए अपनी इन्द्रियो का सयम करे।

इन्द्रियाँ :

☐इस शरीर मे पाच इन्द्रियाँ है, वे अपना-अपना कार्य करती

हैं। कुछ इन्द्रियाँ जुड़वा होते हुए भी कार्य एक करती हैं। आँखें दो हैं, किन्तु दोनों का कार्य एक है—देखना। कान दो हैं, किन्तु दोनों का कार्य एक है—सुनना। नाक दो हैं, किन्तु दोनों का कार्य एक है—सूँघना। जिह्वा एक है किन्तु उसके कार्य दो हैं—एक बोलना और दूसरा रस्वास्वाद करना।

☐ जिस साधक की इन्द्रियाँ कुपथगामिनी हो गई हैं, वह दुष्ट घोड़ों के वश में पड़े हुए सारथि की तरह उत्पथ में भटक जाता है। ○○

ईश्वर शरण :

□एकमात्र ईश्वर की शरण ग्रहण करनेवाले को किमी की शरण की आवश्यकता नही रहती ।

ईश्वर की पूजा :

□जिस किसी प्रकार से, जिम किसी प्राणी को सतोप दे सके, वास्तव मे यही ईश्वर की पूजा है ।

ईश्वरमय :

□जो ईश्वरमय हैं, उसका क्षय कैसा ?

ईमानदारी :

□ईमानदारी के एक पैसे मे बेईमानी के लाख रुपये से अधिक बल है । क्योंकि वह स्थायी है । उस पैसे के साथ सत्कर्म का गौरव जुडा हुआ है ।

□जो यह कहता है कि 'ईमानदार व्यक्ति' नाम की कोई वस्तु है ही नही, वह स्वय धूर्त है।

ईर्ष्या :

□ईर्ष्या करने वाले मनुष्य मे स्वय कुछ बनने की महत्वाकांक्षा नही होती, अपितु उसकी अभिलाषा होती है कि दूसरा भी मार्ग पतित होकर उसके समान हो जाए। इसीलिए ईर्ष्या को पाप माना गया है।

ईर्ष्या-मात्सर्य के कारण :

□प्रिय-अप्रिय होने से ही ईर्ष्या एव मात्सर्य होते हैं, प्रिय-अप्रिय के न होने मे ईर्ष्या एव मात्सर्य नही होते।

ईर्ष्यालु :

□ईर्ष्यालु लोग बडे दुःखी लोग हैं, क्योकि जितनी यन्त्रणाएँ उन्हे अपने दुःखो से होती है उतनी ही दूसरो की खुशियो मे।

ईमानदार :

□बेईमान ईमानदार को हानि नही पहुंचा सकता। बेईमान यदि कभी ईमानदार को धोखा देने की कोशिश करेगा तो वह धोखा लौटकर बेईमान को ही हानि पहुँचाएगा।
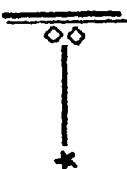
उपदेश :

□ विना मागे किसी को उपदेश मत दो ।

उद्योगवीर :

□ जो पुरुष उद्योगवीर है, वह कोरे वाग्वीर पुरुषो पर अपना अधिकार जमा लेता है ।

उऋण होने का तरीका :

□ कर्ज चुकाने के दो ही उपाय हैं—आमदनी बढाने के लिए मेहनत करना, या खर्च मे किफायतशारी करना ।

उचित :

☐ पाप में पडना मनुष्योचित है।
पाप मे पडे रहना दुष्टोचित है।
पाप पर दुःखी होना सन्तोचित है।
पाप से मुक्त होना ईश्वरोचित है।

उच्चसंस्कृति :

☐बडी से बडी बात को सरल से सरल तरीके से कहना उच्च संस्कृति का प्रमाण है।

उठो, जागो और ज्ञान प्राप्त करो :

☐"उत्तिष्ठत जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत"
हे अज्ञान से ग्रस्त लोगो! उठो, जागो और श्रेष्ठ जनों के पास जाकर ज्ञान प्राप्त करो।

उत्तम :

☐प्राणी मात्र को न सताना ही उत्तम दान है, कामना का त्याग ही उत्तम तप है। वासनाओं को जीतने मे ही वीरता है और सत्य ही समदर्शन है।

☐सर्व व्रतों मे श्रेष्ठ ब्रह्मचर्यव्रत।
सर्व त्यागों में उत्तम रसत्याग।
सर्व धर्मों में श्रेष्ठ अहिंसा परमोधर्म।
सर्व तपों मे श्रेष्ठ आयंबिल तप।

सर्व दानो मे श्रेष्ठ अभयदान ।

सर्व पात्रो मे श्रेष्ठ सुपात्रदान ।

सर्व श्रावको मे श्रेष्ठ बारहव्रतधारी श्रावक ।

उत्तम उपाय

☐दुर्जनो की मित्रता जैसी खतरनाक है वैसी शत्रुता भी प्राण-नाशक है । उपेक्षा ही उसका उत्तम उपाय है ।

उत्तम क्या है

☐वही उत्तम भोजन है, जो साधु, दीन, दुखियो को दान देकर बचा है । वही मित्रता है, जो दूसरे मनुष्य से की जाती है, वही बुद्धिमानी है, जिसमे पाप नही है । वही धर्म है, जो बिना छल कपट के किया जाता हे ।

उत्तम-पुरुष :

☐उत्तम पुरुष जिस कार्य को आरभ करते है उसे पूर्ण करके ही छोडते हैं ।

उत्तम-वाणी :

☐जिसका अन्तर्जीवन जैसा होता है वैसी ही उसकी वाणी होती है । उत्तम जीवन जीने वाले के पास ही उत्तमवाणी मिलती है । जूते की दुकान पर कही मिठाई मिलती है ?

उत्तम विचार :

☐पाप लकड़ी के समान और ज्ञान अग्नि के समान हैं । यदि

लकड़ी अधिक हो और अग्नि थोड़ी हो तो भी वह धीरे-धीरे सब लकड़ियो को भस्म कर देती है। वैसे ही थोड़े से उत्तम विचार हो तो भी वे बहुत दिनो के बुरे विचारो को नष्ट कर देते है।

उत्थान पतन :

□ आत्मा का उत्थान पतन, ऊर्ध्वगमन, अधोगमन भावनाओ पर, सकल्पो पर आधारित है।

उत्सर्ग और अपवाद :

□ जीवन मे नियमोपनियमो की जो सर्वमान्य विधि—नियम है वह उत्सर्ग है। विशेष अवसरो पर विशिष्ट विधानो का संकेत है वह अपवाद है।

उत्साह :

□ विश्व इतिहास मे प्रत्येक महान और महत्वपूर्ण कार्य उत्साह से ही सफल हुए है।

□ अन्धे उत्साह से हानि ही हानि है।

□ अखण्डित उत्साह बड़ी सम्पत्ति है। वीर पुरुषो के हृदय मे खेद और आलस्य के लिए कोई अवकाश नही होता।

उदार :

□ जिसे विश्व ही अपना घर लगता है उसे परिग्रह रखने की क्या आवश्यकता ?

उदारता :

☐भाग्यशाली व्यक्ति उदार होता है। क्योकि उदारता से ही उसका भाग्य खिलता है।

☐उदारता का हर काम स्वर्ग की ओर एक कदम है।

उद्दण्ड :

☐जो उद्दण्ड व्यक्ति होते है वे दण्ड और शस्त्र से जर्जर, असभ्य वचनो के द्वारा तिरस्कृत, करुण, परवश, भूख, और प्यास से पीडित होकर दुःख का अनुभव करते हुये देखे जाते है।

उद्देश्य

☐महान उद्देश्य से शासित व्यक्ति को भाग्य नही रोक सकता।

उद्योगी

☐उद्योगी व्यक्ति के सामने साध्य असाध्य का प्रश्न नही उठता उसके लिए तो सभी कुछ साध्य होता है।

उन्नति :

☐प्रत्येक को अपनी ही उन्नति मे सतुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति मे ही अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

☐आधुनिक उन्नति मे जो सम्पत्ति बढ रही है, जब तक वह पूजी-निर्माण और विलासता की उत्पत्ति मे लगी रहेगी, तब तक उन्नति सच्ची और स्थायी नही बन सकती।

उन्नति और अवनति

☐मन की शक्तियों का केन्द्रीकरण ही जीवन की उन्नति है। और मन की शक्तियों का विकेन्द्रीकरण ही अवनति है।

उन्नति के महागीत :

☐ऊँचा ध्येय, परोपकार व निस्वार्थ बलिदान की भावना ये उन्नति के महागीत हैं।

उन्माद :

☐बात पर जब 'वाद' का भूत सवार हो जाता है तो वह 'उन्माद' बन जाता है।

उपकार-अपकार :

☐न तो कोई जीव का उपकार करता है और न कोई उसका अपकार ही शुभाशुभ भाव ही जीव का उपकार-अपकार करता है।

उपदेश :

☐जिसे हर कोई देने को तैयार रहता है पर लेता कोई नहीं, ऐसी वस्तु क्या है ? उपदेश, सलाह।

☐जहाँ उपदेश अधिक दिया जाता है वहाँ गम्भीरता कम हो जाती है। जहाँ गम्भीरता अधिक होती है, वहाँ उपदेश कम होता है।

☐ उपदेशामृत मे सचमुच ही,
मधुरअमृत रस झरता है ।
क्षणभगुर दूपित जीवन को,
अजर-अमर शुचि करता है ।

☐जब मैं अपने हमउम्र मित्रो के साथ पिता के सठियाने का मजाक उडाने में तल्लीन था, तभी मेरा पुत्र मेरी डायरी पर "अ" से "असभ्यता" लिख कर चला गया ।

☐उपदेश देना सरल है, उपाय बताना कठिन है ।

☐जो उपदेश आत्मा से निकलता है, आत्मा पर सबसे ज्यादा कारगर होता है ।

उपयोगिता :

☐उपयोगिता मे ही सच्ची सुन्दरता है । यह ज्ञान तो तू शीघ्र प्राप्त कर ही ले ।

उपयोगी :

☐शास्त्रो की सख्या अपार है, विद्याएँ अनन्त हैं । किन्तु वही शास्त्र या विद्या उपयोगी है जो आचरण मे लाई जा सके । जल-राशि अपार है, किन्तु वही जल उपयोगी है जो पिया जा सके ।

उपयोगी जीवन :

☐भार नही, किन्तु आधार, अर्थात उपयोगी बन कर जीवो ।

उपवास :

□उपवास-लघन महान औपधि है। शरीर-शुद्धि और मन शुद्धि को सम्पादन करने की अद्भुत क्षमता उसमें है।

उपहास :

□वृद्ध का, मूर्ख का, रोगी का, एव असहाय का उपहास नहीं करना चाहिए।

उपाधि

□तीन सबसे बडी उपाधिया जो मानव को दी जा सकती है, यह हैं—शहीद, वीर, और सन्त।

उपेक्षा .

□किसी भी काम को लापरवाही से बुरी तरह से करने की अपेक्षा न करना ही अच्छा है। बुरी तरह करने से पछताना पडता है। जो काम करने जैसा हो, उसे अच्छी तरह मन लगा कर करना ही अच्छा है। अच्छी तरह करने पर पीछे पछतावा नही होता।

उर्वशी :

□विश्वामित्र की तपस्या को भग करने वाली उर्वशी थी। मनुष्य के मन को भ्रमित करने वाली मोहिनी उर्वशी ही है।

उल्लंघन :

□जो सज्जनों की मान मर्यादा का भग करता है उसकी आयु, सम्पत्ति, यश, धर्म, पुण्य और श्रेय सभी नष्ट हो जाते हैं। ००

एकता के सूत्र :

□"संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्"

हे मनुष्यो ! तुम समष्टि-भावना से प्रेरित होकर एक साथ कार्यों में प्रवृत्त होओ, एकमत से रहो और परस्पर सद्भाव से बरतो।

एक धर्मवाले :

□मैं देखता हूं कि सारी दुनिया के समझदार और विवेकी मनुष्य एक ही धर्मवाले थे, साहस और भलाई के धर्मवाले।

एकरूपता :

□मन, वचन और शरीर इन तीनों की एक क्रिया होनी चाहिए जैसा भीतर वैसा बाहर।

एकाग्रता :

☐यदि जीवन मे बुद्धिमानी की कोई बात है तो वह एकाग्रता है और यदि कोई खराब बात है तो वह अपनी शक्तियो को बिखेर देना। बहु-चित्तता कैसी भी हो, इससे क्या लाभ ?

☐जो व्यक्ति जीवन मे एक बात खोजता है वह आशा कर सकता है कि जीवन समाप्त होने से पूर्व वह उसे प्राप्त हो जायगी।

☐जब मैं किसी काम मे लग जाता हूं उस समय संसार की और कोई बात मेरे सामने नही रहती। यही उपयोगी पुरुष बनने की कुजी है, परन्तु लोग इसे अपने मनोरजन के समय भी साथ नही रख सकते।

☐जिसमे तुम्हारी प्रवृत्ति हो, उसी मे लगे रहो। अपने बुद्धि के मार्ग को मत छोडो। प्रकृति तुम्हे जो कुछ बनाना चाहती है वही बनो। तुम्हे विजय प्राप्त होगी। इसके विपरीत यदि तुम और कुछ बनना चाहोगे तो कुछ भी न बन सकोगे।

☐कार्य सिद्धि के लिए एकाग्रता की नितान्त आवश्यकता है। एकाग्रता मानव को तदाकार बना देती है। एक ही क्रिया मे शक्ति लगाने से क्रिया निखर जाती है अन्यथा वह बिगड जाती है।

एकान्तवास

☐एकान्तवास शोक-ज्वाला के लिए समीर के समान है।

एहसान :

☐केवल वही सच्चा एहसान कर सकता है जो एकबार एहसान करके भूल चुका हो।

ऐश्वर्य :

☐जैसा कि मधु जुटाने वाली मधुमक्खी का छत्ता बढता है, अनेक नदियो के सयोग से समुद्र बढता है। वैसे ही धर्मानुसार कमाने वाले का ऐश्वर्य बढता है।

औषध :

☐मेरा विश्वास है कि आज का सम्पूर्ण चिकित्साशास्त्र और औषधियाँ यदि समुद्र मे डुबो दी जाएँ तो यह मनुष्य का परम सौभाग्य होगा किन्तु समुद्रस्थ प्राणियो का दुर्भाग्य।

☐सभी औषधो मे सर्वोत्तम है, विश्राम और निराहार।

☐पथ्य मे रहने वाले रोगी के लिए औषध की आवश्यकता नही है और पथ्य मे न रहने वाले रोगी के लिए भी औषध की आवश्यकता नही।

कान :

□कानो के दुरुपयोग से मन बहुत अशान्त और प्रदूषित हो जाता है, कान इसका अनुभव नही कर पाते ।

करुणा :

□आसू करुणा के बूद है ।

कर्ज :

□कर्ज अथाह सागर है । उसे पार करना सामान्य व्यक्ति की सामर्थ्य से बाहर है ।

कामनाएं :

□कामनाएं समुद्र के समान नि:सीम हैं, उनका कहीं अन्त नही है ।

कल्पना :

☐पागल, प्रेमी और कवि, इनकी कल्पनाएँ एक-सी होती हैं।

☐कल्पना में जो आनन्द है वह यथार्थ में नही है।

☐कल्पना विश्व पर शासन करती है।

क्रान्तदर्शी :

☐क्रान्तदर्शी श्रेष्ठ ज्ञानी ऐश्वर्य से समृद्ध होकर भी किसी को पीड़ा नही देते हैं, सब पर अनुग्रह ही करते हैं।

कवच :

☐परमात्मा का विश्वास ही मेरा आन्तरिक कवच है।

कवि :

☐कवि की पदवी कितनी महान है, कैसी उच्च है। वह दिलो के सिंहासन पर राज्य करता है, वह सोती हुई जाति को जगाता है, वह मरे हुए देश में नवजीवन का संचार करता है।

☐कवि का हृदय जल में कमल पात्र की तरह निर्लेप होता है। उस पर उसकी रचना या कल्पना का कोई प्रभाव नही पड़ता।

☐कवि सृष्टि के सौन्दर्य का मर्मज्ञ है। वह ऐसा यन्त्र है जिसके द्वारा सृष्टि का सौन्दर्य देखा जाता है।

काम-भोग :

☐काम-भोग शल्य है, विष है और आशीविष सर्प के तुल्य है।

काम-भोग की इच्छा करने वाले, उनका सेवन न करते हुए भी दुर्गति को प्राप्त होते है ।

क्लेशभागी :

□मैं लोक-समुदाय के साथ रहूंगा—ऐसा मान कर अज्ञानी मनुष्य धृष्ट बन जाता है। वह कामभोग के अनुराग मे क्लेश पाता है।

कलंक :

□जिस वस्तु के देखने मे कलक लगता हो, उसे न देखो, जिस तरह चौथ के चाद को कोई नही देखता ।

कष्ट :

□आज के कष्टो का सामना करने वाले के पास आगामी कल के कष्ट आते हुए झिझकते हैं।

कन्दर्पी-भावना :

□काम-कथा करना, हँसी-मजाक करना, आचरण, स्वभाव, हास्य और विकथाओ के द्वारा दूसरो को विस्मित करना—कदर्पी भावना है ।

किल्विषिकी भावना :

□ज्ञान, केवलज्ञानी, धर्माचार्य, सघ और साधुओं की निन्दा करना, माया करना किल्विषिकी भावना है ।

कजूस :

□कृपण-कजूस आत्महत्या करने चलेगा तो जहर भी दूसरे से ही माग कर खायेगा। जिस प्रकार किसान खेत की रक्षा के लिए अडवा बनाता है। वह अडवा न तो खा सकता है और न खाने देता है। कृपण व्यक्ति भी उसी के समान है, न खुद खाता है और न खाने देता है।

□मधुमक्खी अपने शहद को न तो खाती है और न खाने देती है। किन्तु तीसरा व्यक्ति जबर्दस्ती उस शहद को उठा ले जाता है और वह हाथ मलती है। यही स्थिति कजूस की भी होती है।

कठिन

□सबसे कठिन तीन वस्तुएँ है—१ रहस्य को अप्रकट रखना २ कष्ट को भूल जाना और ३. अवकाश का सदुपयोग करना।

□बहुतसी वस्तुए, जो आकार मे कठिन प्रतीत होती है, करने मे उतनी ही सरल निकलती है।

कठिनकार्य :

□राई के दाने जब बिखर जाते है तो उन्हे एकत्रित करना कठिन हो जाता है। उसी प्रकार एकबार मन के भटक जाने पर उसे स्थान पर लाना कठिन व दु.साध्य हो जाता है।

कठिनाइया

□प्रकृति जब कठिनाईयाँ बढाती है तो बुद्धि भी बढाती है।

□कठिनाईयो मे ही सिद्धान्तो की परीक्षा होती है, बिना विपत्तियो मे पडे मनुष्य नही जान सकता कि वह ईमानदार है या नही। कठिनाइयो मे ही मित्र की परीक्षा होती है।

धीरज धर्म मित्र अरु नारि,
आपत्तिकाल परखिये चारि।

□जिस प्रकार श्रम शरीर को शक्ति प्रदान करता है उसी प्रकार कठिनाईयाँ मनुष्य को शक्तिसम्पन्न बनाती है।

□सत्य की ओर ले जाने वाला प्रथम प्रशस्त मार्ग कठिनाईयाँ है।

कडा परिश्रम

□सफलता की बडी कुंजी है—कडा परिश्रम और एकाग्रता।

कणभर

□कणभर आचरण मणभर ज्ञान से श्रेष्ठ है।

कण से मोती

□वर्षा की एक बूंद बादल से निकल कर नीचे की ओर जा रही थी, तब उसने समुद्र की लम्बाई चौडाई देखी तो स्तम्भित हो गई व अपनी विशालता से भी विशाल समुद्र को देखकर लज्जित हो गई। बोली—मैं कहाँ तुच्छ, और ये कहाँ विशाल! मेरा

स्वतन्त्र अस्तित्व ही तुझ मे मिलने से खत्म हो जायेगा।
जब बूद ने अपने को तुच्छ समझा तो सीप ने उसे अपने मे समा लिया व अपनी जान से भी ज्यादा समझकर पालन पोषण किया। वह बूद चमकीले मोती के नाम मे मशहूर हो गई।

कथनी और करनी

☐मनुष्य के पास जीवन का ध्येय न हो तो उसका जीवन विलासिता मे फँस जाता है, अगरबत्ती अग्नि के सयोग से वातावरण को सुवासित कर देती है उसीप्रकार कथनी और करनी का सयोग हो जाय तो इससे शान्ति का परिमल प्रकट हो जाता है।

कमी है :

☐ससार मे मार्गदर्शक की कमी नहीं है किन्तु मार्गपर चलने वालो की कमी है।

कयामत

☐कर्जदारी को मामूली असुविधा समझने की आदत न डालो, नही तो अन्त मे पाओगे कि कर्जदारी कयामत है।

करके कहो :

☐कथनी करनी मे अन्तर है। मानव को प्रथम करना चाहिए। सशयशील व्यक्ति कर नही सकता। जिसने किया है, वह निसकोच होकर कह सकता है।

कर्त्तव्य :

□जीवन का सबसे बड़ा पुरस्कार, जीवन की सबसे बडी सम्पत्ति है—किसी विशेष बात को लेकर जन्म लेना। उसी की पूर्ति करने मे मनुष्य को सुख मिलता है।

□एक सार्वजनिक कर्त्तव्य को सम्पन्न करते समय व्यक्तिगत विचार कदापि बाधक नही होना चाहिए।

□अपना कर्त्तव्य करने से हम उसे करने की योग्यता प्राप्त करते हैं।

□जो अपना कर्त्तव्य करने से चूकता है, वह एक महान लाभ से स्वय को वञ्चित रखता है।

□कर्त्तव्य श्रेष्ठ होता है पर कभी-कभी भाग्य भी प्रबल होता है। तकदीर से तदबीर श्रेष्ठ होती है। अत: हे मानव! तू भगवान पर विश्वास रखकर सुपन्थ का अवलम्बन ले।

□एक कर्त्तव्य करने का इनाम यही है कि दूसरा कर्त्तव्य करने की शक्ति मिलती है।

कर्त्तव्यशील

□जो व्यक्ति सर्दी, गर्मी तथा अन्य छोटे, बडे विघ्नो को तिनके से अधिक महत्त्व नही देता, वह कभी सुख से वंचित नही होता।

कर्त्तव्य से मुह चुराना :

□आज बहुत सर्दी है, आज बहुत गर्मी है, अब तो रात पड़ गई

है, आज काम करने का मूड नही है। आज मुहूर्त अच्छा नही है, इस प्रकार के बहाने खोजकर कर्त्तव्य से दूर भागता हुआ मनुष्य धनहीन दरिद्र हो जाता है।

कर्म :

□मनुष्य किसी दूसरे कारण से नही, अपने ही कर्मों से मारा जाता है।

□अपवित्र विचार भी उतना ही बुरा है जितना बुरा अपवित्र कर्म। सयमित इच्छा ही सर्वोच्च परिणाम पर ले जाती है।

□किसी भी कार्य के आरम्भ से पूर्व सुसम्मति प्राप्त कर लो, और पूर्णत. उसमे लग जाओ।

□जिस वृक्ष की जड सूख गई हो, उसे कितना ही सींचिये, वह हरा-भरा नही होता। मोह के क्षीण होने पर कर्म भी फिर हरे भरे नही होते।

कर्म-फल :

□अच्छे कर्म का अच्छा फल और बुरे कर्म का बुरा फल होता है। "सुचिण्ण कम्मा सुच्चिणणफला,

दुच्चिण्ण कम्मा दुच्चिण फला भवई।"

□सेंध के द्वार पर पकडा गया पापी चोर जैसे अपने ही कर्म से मारा जाता है, इसी प्रकार पापी जन मरकर परलोक में अपने ही कर्म से पीडित होता है।

कर्ममुक्त आत्मा :

☐परलोक, पाप, पुण्य, नरक, स्वर्ग, उपदेश, आदेश देह के लिए नही, आत्मा और देह को जोडने वाला कर्म है। कर्म से मुक्त आत्मा इन सबसे मुक्त होता है।

कल'

☐आज नही कल, 'कल'—यही आलसी व्यक्तियो का गान है।

☐स्वय को कल पर आश्वस्त मत कर, क्योंकि मुझे नही मालूम कि कोई दिवस तेरे लिए क्या लायेगा।

☐गहन तमिस्रा मे भी मुकुलित 'कल' निहित।

कलक चढाने का फल

☐जो शुद्ध, निष्पाप,· निर्दोप व्यक्ति पर दोप लगाता है, उस अज्ञानी जीव पर वह सब पाप पलटकर वैसे ही आ जाता है, जैसे कि सामने की हवा मे फेकी गयी सूक्ष्म धूल।

कल नहीं आज :

☐जो कर्त्तव्य कल करना है, वह आज ही कर लेना अच्छा है। मृत्यु अत्यन्त निर्दय है। पता नही वह कब आ जाये।

☐आज ही अपने कर्त्तव्य मे जुट जाना चाहिए। कौन जानता है कल मृत्यु ही आ जाये ?

कलम :

☐शस्त्र की अपेक्षा कलम का शस्त्र अधिक वलवान है क्योंकि

कलम रूप शस्त्र का प्रयोग सामाजिक, आर्थिक एवं धार्मिक क्रांति मे तोप, तलवार और अणुबम से भी अधिकतम बलवान है। सिर्फ एक ही शब्द मे ससार भयाक्रान्त व शान्तिशील बन जाता है।

कला :

□ मानव की बहुमुखी भावनाओ का प्रबल प्रवाह जब रोके नही रुकता, तभी वह कला के रूप मे फूट पडता है।

कला और विज्ञान :

□ कला और विज्ञान की उन्नति की कसौटी है जनता का उपकार, जनता को राहत, जनता का आनन्द और सुविधा ! अगर कला और विज्ञान ये चीजें देने मे असमर्थ रहे, तो यह समझना चाहिए कि वे उन्नति के बदले अवनति कर रहे हैं।

कलाकार :

□ महान कलाकार वह है जो सत्य को मग्न कर दे।

□ सबसे बडा कलाकार वह है, जिसकी कला मे महानतम विचार बडी सख्या मे हो। कलाकार अन्तर को देखता है बाह्य को नही।

कलियुग :

□ जिसका हृदय दया से भरा हुआ है, जिसके वचन सत्य से भरे हैं और जिसका शरीर दूसरो का हित करने मे लगा हुआ है। उसका कलियुग क्या बिगाड सकता है।

कल्पना :

□कल्पना ज्ञान से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है।

□कल्पना आत्मा का नेत्र है।

□जो बिना अध्ययन के केवल कल्पना का आश्रय लेता है, उसके पंख अवश्य है, किन्तु पग नहीं।

कल्पना-शक्ति :

□हममें कल्पना-शक्ति प्रकृति प्रदत्त है और इसी शक्ति से हम इस जगत के अन्धकार को प्रकाशमय बना सकते हैं। बुद्धि एवं चिन्तन में कल्पना का सर्वाधिक शक्तिशाली यन्त्र है।

कल्याण की कामना :

□मेरे प्यारे साथियो ! गर्वपूर्वक उच्च स्वर से यह घोषणा करो कि "जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।" जननी व जन्मभूमि तथा स्वर्ग और इनमें से कोई भी चुनने का कहीं जो प्रश्न आ जाए तो चुनाव करो। भारत की मिट्टी ही तुम्हारा स्वर्ग है, मोक्ष है, भारत के कल्याण में ही तुम्हारा कल्याण निहित है।

कविता :

□कविता ही सबसे बड़ी देन मानी है।

□कविता जब शरीर से बहुत दूर निकल जाती है तो दम तोड़ने लगती है।

□कविता का महान लक्ष्य है कि वह लोगो की चिन्ताओं को शान्त करने और उनके विचारो को उन्नत करने में मित्र का काम करे।

काटो नहीं, खोलो

□गाठ को काटना नही, खोलना चाहिए। काटने से समस्या का हल नही होता। काटना शक्ति का प्रयोग है, और खोलना अहिंसात्मक प्रतिकार।

कानून

□कानून तो जैसे मकडी के जाले है। छोटे-छोटे जीव उनमें फँसकर प्राण खो बैठते है जबकि बडे जीव तो उन्हें उखाड़ फेकते है।

□तर्क ही कानून का जीवन है, यही नही, सामान्य कानून स्वय ही तर्क के अतिरिक्त और कुछ नही है।

कापुरुष

□कापुरुष अपनी मृत्यु से पूर्व ही अनेकों बार मृत्यु का अनुभव कर चुकते हैं, किन्तु वीर कभी भी एक बार से अधिक नही मरते।

□कापुरुष डगमगा जाते हैं, किन्तु साहसी बहुधा आपदाओं पर विजय प्राप्त कर लेते है।

काम :

□ससार के सुन्दर पदार्थ काम नही है, मन मे राग का हो जाना ही वस्तुत काम है ।

□काम प्रत्येक मनुष्य का प्राणरक्षक है ।

काम और कामना

□मनुष्य को काम करना चाहिए, कामना नही । काम मनुष्य को ऊ चा उठाता है और कामना मनुष्य को नीचे गिराती है ।

काम-भोग

□गृहस्थो के काम-भोग स्वल्प-सारवाले और अल्पकालिक है । अनित्य है, कुश के अग्रभाग पर स्थित जल-बिन्दु के समान चचल है ।

काम न करें ·

□समझदार व्यक्ति ऐसे कार्यों का प्रारम्भ न करे जिसका फल न हो, जिनका अन्त बुरा हो, जिनके करने मे आय और व्यय समान हो और जो अशक्य हो ।

कामातुर

□कामातुर व्यक्ति भय और लज्जा से रहित होता है ।

कायर

□कायर तभी धमकी देता है जब सुरक्षित होता है ।

□एक कायर कुत्ता उतनी तीव्रता से काटता नही, जितनी तीव्रता से भौंकता है।

कायरता

□यह ससार कायरो के लिए नही है। पलायन करने का प्रयास मत करो।

कार्य

□जो जिस कार्य मे कुशल है उसको उसी कार्य मे लगाना चाहिए।

□प्रत्येक कार्य द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की अपेक्षा से अच्छा, सच्चा और योग्य है या नही, यह विचार करके ही करना चाहिए।

□कितना कार्य किया है उसका मूल्य नही, किन्तु कैसा कार्य किया है उसका मूल्य है।

□तीरन्दाज व्यक्ति तीर छोडने के पहले निशाना साधता है। बुद्धिमान व्यक्ति कार्य करने के पहले सोचता है।

कार्यकारण भाव

□यदि घट की जरूरत पडेगी तो कुम्भकार के यहा जाना ही पडेगा। कोई भी क्रिया बिना कारण के नही हो सकती। कार्य कारण का सम्बन्ध अन्योन्याश्रित है।

□अन्धकार से प्रकाश की आवश्यकता अनुभव होती है।

☐"नासतः सत् जायते" निरस्तिको से अस्तित्त्व का जन्म नही हो सकता। जिसका अस्तित्त्व है उसका आधार निरस्तित्त्व नही हो सकता। शून्य से कुछ भी सम्भव नही है। यह कार्य कारण सिद्धान्त सर्वशक्तिमान है और देश-कालातीत है।

कार्यसिद्धि :

☐नम्रता, अन्त करण की शुद्धता, बुद्धि, बल और धैर्य इन पाँचो के सहयोग से कार्य सिद्ध होता है।

क्या यह उचित है ?

☐कायरता पूछती है—क्या यह सुरक्षित है ?
लोभ बुद्धि पूछती है—क्या यह लोकप्रिय है ?
लेकिन अन्त करण पूछता है—क्या यह उचित है ?

क्या कहना चाहिए ?

☐धर्म कहना चाहिए, अधर्म नही।
प्रिय कहना चाहिए, अप्रिय नही।
सत्य कहना चाहिए, असत्य नही।

कितना अन्तर

☐वैज्ञानिक प्रत्येक वस्तु का प्रयोग दूसरो पर करके फिर अपने पर करते है, जबकि ज्ञानी प्रत्येक वस्तु का प्रयोग सर्वप्रथम अपने पर करके फिर ओरो पर करते है। एक मे स्वार्थ है दूसरे मे परमार्थ।

☐दोषों का दिग्दर्शन दुर्जन भी कराते हैं व सज्जन भी, किन्तु एक ईर्ष्या के लिए व दूसरा सुधार के लिए।

☐राम भी आये और रावण भी; किन्तु दोनों के आने में कितना अन्तर ? अगरबत्ती भी अपने मुंह से धुआं उगलती है और छोटा दीप भी। किन्तु दोनों में कितना अन्तर ? एक सुवास फैलाती है तो दूसरा कालिमा।

☐पाश्चात्य जगत में और पौवर्वात्य जगत में कितना अन्तर है। एक ओर निज स्वार्थ पर आधारित पाश्चात्य समाजों का अधिकार स्वातन्त्र्य है, दूसरी ओर आर्य जाति का चरम आत्मोत्सर्ग। एक ओर अधिकार लोलुपता व ऐश्वर्य समृद्धि के लिए रक्त की ताण्डव क्रीडा, तो दूसरी ओर आत्मोत्कर्ष के लिए समस्त वैभव का त्याग।

कीर्ति :

☐कीर्ति का नशा शराब से भी तेज है। शराब का छोड़ना आसान है, किन्तु कीर्ति का छोड़ना आसान नहीं।

☐तीन ककार दुर्जय है—कीर्ति, कमला, कामिनी।

कुकर्म की सजा

☐कुदरत कुकर्म की सजा धीरे-धीरे देती है।

कूटनीति :

☐कूटनीति प्राकृतिक मानवीय नियमों के विरुद्ध एक ऐसा दुर्गुण

है जिसने संसार के बड़े भाग को परतन्त्रता की जंजीरो मे जकड रखा है और जो मानवता के विकास मे बड़ी बाधा है।

कृतज्ञता :

☐कृतज्ञता केवल कर्त्तव्य-पालन ही नही, सहयोग प्राप्ति की सफल व उत्कृष्ट कला है।

कृतघ्नी

☐कृतघ्नी मानव से कृतज्ञ कुत्ता अच्छा है।

कृत्रिमता

☐आकृति साम्य होने पर भी कृत्रिमपुष्प महज पुष्प के सौरभ मे सदैव अपने को वंचित पाता है।

सहजता के सन्मुख कृत्रिमता वैसी ही छविहीन प्रतीत होती है जैसे एक कुलागना के सम्मुख पण्यागना।

☐आजकल की दुनिया बाह्य-सुन्दर आवरणो मे वेष्ठित की पूजा करती है, वस्तु के असली स्वरूप को नही पहचानती। असली गुलाब के फूल पावो तले रौंदे जाते हैं जबकि नकली फूलो से गुलदस्ते सजाये जाते है।

क्रूरता

☐क्रूरता से बढ़कर और कोई कुरूपता नही है।

कैसे बोले :

☐आत्मज्ञान साधक दृष्ट, परिमित, असंदिग्ध, प्रतिपूर्ण, व्यक्त,

परिचित, वाचालता रहित, और भयरहित भाषा बोले।

☐ बिना पूछे न बोले, बीच में न बोले, चुगली न खाए, कपट-पूर्ण असत्य का वर्णन करे।

कैसे बोलना चाहिए :

☐ कम बोलो, सत्य बोलो और सादा बोलो।

कैसे हो सकता है :

☐ तूने बीज आक के बोये है और फल आम के चाहता है यह कैसे संभव हो सकता है? कार्य नरक के किये हैं और फल स्वर्ग के चाहता है यह कैसे हो सकता है?

कोरा ज्ञान :

☐ जो अनेक सूत्रों और ग्रन्थों को पढ़कर भी आत्मा को नहीं पहचानता वह कलछी-चमच के समान है, जो रसों में फिरता है किन्तु उनका स्वाद नहीं जानता।

क्रान्तियाँ :

☐ निम्नतर वर्गों की क्रान्तियाँ हमेशा उच्चतर वर्गों के अन्याय का परिणाम होती है। पेट की आग क्रान्तियाँ पैदा करती है।

क्रिया :

☐ जो आश्रव के स्थान है वे निमित्त पाकर संवर के स्थान भी बन जाते हैं और जो संवर के स्थान है वे निमित्त पाकर आश्रव के स्थान भी बन जाते हैं।

☐ जो क्रिया हितकारक, स्वान्तःसुखाय, सर्वजनहिताय की जाती है, वह श्रेष्ठ है।

क्रिया का भेद :

☐ एक मानव आगे बढ़ता जाता है एक पीछे हटता जाता है। क्रिया दोनो की समान होते हुए भी कितना अन्तर, एक अपने लक्ष्य को पा जाता है दूसरा लक्ष्य से दूर।

क्रुद्ध

☐ क्रुद्ध व्यक्ति राक्षस की तरह भयंकर बन जाता है।

क्रोध :

☐ क्रोधी मनुष्य मुँह खुला रखता है और आँखें बन्द कर देता है। क्रोध का अन्त पश्चात्ताप से होता है।

☐ क्रोध दुर्बलता और अज्ञान का चिह्न है।

☐ क्रोध का जन्म विरोध मे होता है और वह प्रतिशोध की आग में जलता है।

☐ क्षुब्ध जल मे प्रतिबिम्ब नही दिखाई देता, उस प्रकार विक्षुब्ध मानस मे मानवता का प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर नही होता।

☐ क्रोध यमराज के समान है, तृष्णा वैतरणी नदी है, विद्या कामधेनु और सन्तोष नन्दन वन है।

☐ जहाँ घास नही होता वहा पडी हुई अग्नि अपने आप शान्त हो जाती है। जहाँ क्रोध का सामना नही होता, वहाँ क्रोध अपने

आप शान्त हो जाता है।

□क्रोध विरोध का बाप है और प्रतिशोध का दादा है।

□जिस समय क्रोध उत्पन्न होने वाला हो, उस समय उसके परिणामो पर विचार करो।

□स्मरण रखिए कि आप क्रोध की दशा ही मे अत्यन्त निर्बल एव क्षीणकाय रहते है, कारण यही है कि क्रोध का अस्त्र स्वय चालक को ही घायल करता है।

□क्रुद्ध होने का अर्थ है दूसरो की त्रुटियो का प्रतिशोध स्वय से लेना है।

□जो क्रोध करने मे विलम्ब करता है वह महान विवेक से सम्पन्न है, किन्तु जिसमे उतावलापन है, वह मूर्खता का उपासक है।

क्रोध की फूत्कार :

□शुद्ध दर्पण पर फूंक मारने से वह धुधला हो जाता है। क्रोध की फूत्कार पवित्र मन पर मत मारो वह धुधला हो जायगा। धुधला मन स्वजन-परजन, हित-अहित के ज्ञान से शून्य बन जायगा।

क्रोध निवारण का उपाय :

□क्रोध आने पर मौन रहो। जिसके प्रति आया है उसके सामने से हट जाओ। किसी के कुछ कहने पर अथवा अन्य किसी कारण

से क्रोध आने पर स्वतन्त्र होकर अलग जा बैठो, ईश प्रार्थना का मत्र जपो।

क्रोध सयम :

□क्रोध मे हो तो बोलने से पहले दस तक गिनो, अगर बहुत क्रोध मे हो तो सौ तक।

क्रमिक विकास :

□प्रथम साधक जीव और अजीव तथा उनकी गतियो को जानता है। उसके बाद पुण्य, पाप, बन्ध और मोक्ष को भी जानता है। यह जानने के बाद वह भोगो से विरक्त होता है। और बाह्य तथा आभ्यन्तर सयोगो को त्याग कर मुनि बनता है। मुनि बनने के बाद वह उत्कृष्ट सवरात्मक अनुत्तर-धर्म का स्पर्श करता है। और अबोधिरूप पाप द्वारा सचित कर्मरज को प्रकम्पित कर देता है। तदनन्तर वह सर्वत्रगामी ज्ञान और दर्शन को प्राप्त कर लेता है। सम्पूर्ण ज्ञाता और दर्शक बन कर योग का निरोध कर शैलेशी अवस्था को प्राप्त होता है और कर्मों का क्षय कर मुक्त बन सिद्धि को प्राप्त करता है। सिद्धि को प्राप्त कर वह लोक के मस्तक पर स्थित शाश्वत स्थान पर विराजमान हो जाता है। और फिर कभी भी पुनरागमन नही करता।

खण्डन-मण्डन :

□वस्तु को वस्तु के रूप मे जानने के बाद खण्डन मण्डन की

कतई आवश्यकता नही रहती।

खानदानी :

☐ खानदानी बाजार मे नही, वंश परम्परा मे मिलती है।

खाली हृदय :

☐ एक किसान खेत मे दिन भर मेहनत करके खेत को पानी से भर देता है, किन्तु बाद मे जाकर देखता है कि खेत सारा का सारा खाली है। पानी छिद्रों प्रछिद्रों से बह जाता था। इसी प्रकार मानव दिनभर सन्तो की वाणी सुनकर अपने हृदय रूपी खेत मे पानी डालता है किन्तु वासना, लोभ और अहंकार के छिद्रो से वह सारा का सारा बह जाता है। आत्मा को सुजला सुफला बनाने से वञ्चित रह जाता है।

☐ लोहा जब तपाया जाता है तब तक लाल रहता है किन्तु जब बाहर आता है तब शीतल पानी और हवा से काला पड जाता है। यही स्थिति सांसारिक मनुष्यो की है। जब तक वह सन्तो की संगति में धार्मिक स्थानो मे रहता है तब तक पवित्र रहता है किन्तु बाहर आते ही जैसा का वैसा हो जाता है।

खूबसूरत :

☐ याद रखो कि दुनिया मे सबसे ज्यादा खूबसूरत चीजे सबसे ज्यादा निकम्मी होती है, जैसे मोर और गुलाब।

खुशी दो :

☐यदि तुम खुशी चाहते हो तो अपनी खुशी दूसरो को भी दो वह खुशी अपने आप तुम्हारे पास लौट आयेगी ।

खेदजनक :

☐जिनको हम कह सकते है उनको कहने के लिए हम तैयार नही, किन्तु जिनको हम नही कह सकते है उनको कहने के लिए उत्कठित है कितनी शर्मनाक बात है !

ख्याति की तृषा .

☐ख्याति वह तृपा है जो कभी नही बुझती । अगस्त्य ऋषि की तरह वह सागर को पीकर भी शान्त नही होती ।

गतिशील :

☐सूर्य समुद्र से जलग्रहण करता है, किन्तु उसे वर्पा ऋतु मे लौटाने के लिए । तुम भी आदान-प्रदान के एक यत्रमात्र हो । तुम ग्रहण करते हो, ताकि तुम दे सको । अत. बदले मे कुछ मागो मत, क्योकि तुम जितना अधिक दोगे, उतना ही अधिक पाओगे । नदी का प्रवाह सतत समुद्र मे गिर रहा है और सतत भरता जा रहा है । उसका समुद्र मे गिरने का द्वार अवरुद्ध मत करो जिस क्षण तुम यह करोगे, मृत्यु तुम्हे पकड लेगी ।

गम्भीरता :

☐गम्भीर व्यक्ति किसी भी अवस्था मे अपनी गम्भीरता नही

छोड़ते, किन्तु जो उछले पेट का होगा वह तनिक सी बात पर उछल जायेगा अतः उसे छेड़ो मत। गागर को छुओ ही मत, तो उसमें आवाज होने का सवाल ही नहीं पैदा होगा।

ग्रहण शक्ति :

□संसार में गन्दे और स्वच्छ दोनों प्रकार की पानी की नालियां हर समय बहती हैं। किन्तु मन की टंकी में स्वच्छ पानी ही आये, गन्दा नहीं, इसका ध्यान रखना चाहिए।

गरीबी :

□गरीबी सज्जनता की कसौटी है और मित्रता की परीक्षा।

गलतियां :

□पुरुषों की गलतियों में उनकी स्वार्थपरता निहित रहती है, नारियों की त्रुटियों के मूल में उनकी दुर्बलता।

□मैंने जो थोड़ी-बहुत दुनिया देखी है उसमें मैंने यही सीखा है कि दूसरों की गलतियों पर अफसोस करूँ न कि गुस्सा।

□भूल करना मनुष्य का स्वभाव है। की हुई भूल को स्वीकार कर लेना एवं वैसी भूल फिर न करने का प्रयास करना वीर एवं शूर होने का प्रतीक है।

गहरी चोट :

□जो शान्तिपूर्वक सब कुछ सह लेते हैं, उनके बारे में यह बिल-कुल निश्चित है कि उन्हें आन्तरिक चोट गहरी पहुँची होती है।

गिरने का भय :

□जो जितना जल्दी ऊंचा चढता है उसे गिरने का भय भी उतना ही है। अत चढने के बाद गिरने से बचना ही बुद्धिमानी है।

गुण :

□प्राणी की महत्ता उसके गुणो से होती है, ऊंचे आसन पर बैठने से नही। कौवा क्या महल के शिखर पर बैठने से गरुड के समान हो जाता है ?

□यदि गुण शत्रु के भी हो तो उसका बखान करना चाहिए।

□गुणवान मनुष्य के गुण स्वय प्रकाशित हो जाते है उन्हे प्रसिद्धि की आवश्यकता नही रहती। कस्तूरी की सुगन्ध को शपथ से नही बताया जाता।

गुणी

□गुणी मनुष्य अपनी प्रशसा स्वय नही करते बल्कि दूसरो से अपनी प्रशसा सुनकर नम्र हो जाते है।

गुण और दोष :

□ससार मे गुण भी है तो दोष भी है। दोष को देखने वाला दोषी बनता है तो गुणो को देखने वाला गुणी।

□जो गुण दोष का कारण है, वह वस्तुत गुण होते हुए भी दोष ही है। और वह दोष भी गुण है, जिसका की परिणाम

सुन्दर है अर्थात् जो गुण का कारण है।

गुण-दोष के कारण :

☐मन, वचन और काया के तीनों योग अविवेकी के लिए दोष के कारण है और विवेकी के लिए गुण के कारण।

गुणग्रहण :

☐मधु मक्षिका की तरह गुलाब में मधु ले लो और काटे को छोड़ दो।

गुणदर्शन :

☐दूसरो के गुणो को देखते रहो, तुम्हारे दोष अपने आप चले जायेगे।

गुणवान :

☐इनसान दौलत से बड़ा नही किन्तु गुणों से बड़ा होता है। हाथी की झूल पहनने से कही गधा भी हाथी हो सकता है?

☐प्रत्येक व्यक्ति के हृदय मे सहानुभूति, शालीनता, मृदुता और और न्याय-परता रही है। जिनमे इन सद्गुणो का अभाव है सो वह मनुष्य ही नही पशु के समान है। प्रेम मानव का हृदय और सद्विचार उसका पथ है।

☐गुणवान ही गुणी जनो को पहचान सकता है, निर्गुणी गुणवान को नही पहचान सकता।

गुणों की पूजा

☐लोग प्राणियो के गुणो का सम्मान करते है, केवल जाति का कही भी नही। टूटा हुआ काच का बर्तन कौडी के दाम मे भी नही बिकता।

गुणो की सुगन्ध :

☐पुष्पो की सुगन्ध हवा के रुख के अनुसार अपनी दिशा निर्दिष्ट करती है हवा के साथ साथ फूल अपना मकरद बिखेर देते है। किन्तु गुणशील व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को हवा के प्रतिकूल भी प्रवाहित करता है।

गुप्त अपराध ·

☐चरित्रहीन की मानसिक यत्रणाए नरक की यत्रणाओ से बढ कर है।

☐आमरणात् कि शल्य ? प्रच्छन्न यत् कृतमकार्यम् ॥
जीवन पर्यन्त हृदय मे काटे की तरह क्या चुभता है ? छिपकर कियागया अपराध।

गुप्तदान ·

☐महात्मा ईसा कहते है—"जो तुम दाहिने हाथ से दान देते हो उसका पता बाए हाथ को भी न लगे।"

गुप्तभेद

☐अपने शुभकार्यो को गुप्त रखना चाहिए। उसका प्रचार करने

से अहंवृत्ति जागृत होती है। और सत्कार्य निष्फल हो जाते हैं।

गुप्तरहस्य :

□ देशकाल और व्यक्ति को समझ कर ही गुप्तरहस्य प्रकट करना चाहिए।

गुलाम

□ जिसकी अपनी कोई राय नहीं, वल्कि दूसरो की राय और रुचि पर निर्भर रहता है, वह गुलाम है।

गुलामी

□ पर-पुरुष की गुलामी की अपेक्षा पर विचारों की गुलामी भयंकर है। क्योंकि विचार-गुलामी को वह पहिचान नहीं सकता। यही तो खतरनाक है।

घटता नहीं, किन्तु बढ़ता है :

□ दान से धन घटता नहीं किन्तु बढ़ता है। भूलों को माफ करने से सज्जन घटती नहीं, किन्तु बढ़ती है। नम्रता से मान घटता नहीं किन्तु बढ़ता है। विद्यादान से विद्या घटती नहीं किन्तु बढ़ती है।

घनिष्ठता .

□ अधिक घनिष्ठता ही घृणा की जन्मदात्री है।

घवराहट :

□घवराहट से मनुष्य की कार्यशक्ति का आधा वल क्षीण हो जाता है और शेष रहा आधा वल घवराहट मे बिगडे हुए कार्यों को सुधारने मे लग जाता है। इस प्रकार घवराहट का कुल नतीजा अकर्मण्यता या शून्यता होता है।

घमण्ड :

□घमण्ड से आदमी फूल सकता है, फैल नही सकता। घमण्ड की हवा से फुटवाल ठोकरे खाता है।

□घमण्डी का सिर नीचा रहता है। घमण्ड करने वाला व्यक्ति अवश्यमेव नीचे गिरता है।

□अत्यन्त क्षुद्र व्यक्तियो का घमण्ड अत्यन्त महान होता है।

घर .

□आपका अपने घर मे कर्त्तव्य भी है, अधिकार भी है, घर को स्वर्ग बनाना है तो कर्त्तव्य का सूत्र अपनाना पडेगा। इसलिए कि आप उसके मालिक है।

घर एक पाठशाला है .

□जीवन को बनाने वाली पाठशाला गृहस्थाश्रम है। तत्त्वज्ञान प्राप्त करने वाली पाठशाला भी घर ही है। पुस्तको या शास्त्रो मे जो तत्त्वज्ञान नही मिलता वह घर से मिलता है।

घृणा

□घृणा मनुष्य के लिए मौलिक पाप है और महान अपराध।

□घृणा करना राक्षस का कार्य है। क्षमा करना मनुष्य का धर्म है, प्रेम करना देवताओं का गुण है।

□घृणा पाप से होनी चाहिए, पापी से नहीं।

□घृणा का जहर प्रेम के अमृत से मिटा दो।

□घृणा कैंची है, प्रेम सूई।

□दूसरों से घृणा करने वाला, संसार में स्वयं घृणित समझा जायेगा। ००

चतुर्मुख ब्रह्मा :

□विवेक के साथ धन, धन के साथ उदारता, उदारता के साथ मधुरता ससार का चतुर्मुख ब्रह्मा है।

चरित्र

□ज्ञान जब आचरण मे व्यक्त होता है तभी चरित्र बनता है। चरित्रशून्य ज्ञान निरर्थक है।

□प्रवृत्तियो का सर्वोत्तम विकास एकान्त मे होता है किन्तु चरित्र का सुन्दर निर्माण विश्व के झंझावातो मे ही हो सकता है।

□प्रत्येक मनुष्य के चरित्र के तीन रूप होते है—एक तो जैसा कि वह स्वय अपने को समझता है, दूसरा जैसा कि अन्य व्यक्ति

उसको समझते हैं और तीसरा जैसाकि वह वास्तव में होता है।

☐हजारदिन का यश एकदिन के चरित्रपर निर्भर रहता है।

☐चरित्र एक शक्ति है, प्रभाव है; वह मित्र उत्पन्न करता है, सहायता और संरक्षक प्राप्त करता है, और धन तथा गुण का निश्चित मार्ग खोल देता है।

चरित्र और यश

☐चरित्र मनुष्य के भीतर रहता है और यश बाहर।

चरित्र निर्माण :

☐जितना समय मनुष्य ने अब तक धर्म-प्रचार में खर्च किया, अगर उसका हजारवाँ हिस्सा भी वह अपने चरित्र-निर्माण में खर्च करता तो दुनिया कितनी उठ गई होती, उसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।

चरित्रहीन :

☐शास्त्रों का बहुत-सा अध्ययन भी चरित्रहीन के लिए किस काम का ? क्या करोड़ों दीपक जला देने पर भी अन्धे को कोई प्रकाश मिल सकता है ?

चलते रहो :

☐जो मनुष्य बैठा रहता है, उसका सौभाग्य भी बैठा रहता है। जो उठकर खड़ा हो जाता है उसका सौभाग्य भी खड़ा हो जाता

है। जो स्वयं सोया रहता है, उसका सौभाग्य भी सोता रहता है, जो उठकर चल पडता है, उसका सौभाग्य भी सक्रिय हो जाता है—इसलिये चलते रहो, चलते रहो। चरैवेति, चरैवेति, चरैवेति।

☐पडे-सोते रहना कलियुग है, चलते रहना ही द्वापर है, उठ बैठना ही त्रेता है और चल पडना ही सतयुग है। अतः चलते रहो, चलते रहो।

चापलूस .

☐चापलूस इसलिए आपकी चापलूसी करता है क्योकि वह आपको अयोग्य समझता है, लेकिन आप उसके मुह से अपनी प्रशसा सुनकर फूले नही समाते।

चारित्र :

☐पृथ्वी की रक्षा समुद्र करता है। घर की रक्षा चार दीवारे करती है। देश की रक्षा शासक करता है तो मानव की रक्षा उसका चारित्र करता है।

☐बुद्धिमान का दुनियाँ सम्मान करती है। चरित्रवान का अनुसरण करती है।

☐जिस प्रकार सूखे घास और खोखले काष्ठ को अग्नि शीघ्र जला कर भस्म कर डालती है। उसी प्रकार शुद्ध चारित्र से साधक अपने कर्मों को शीघ्र जला डालता है।

चारित्र विराधना :

□चारित्र का अर्थ है—'सच्चरण'। अहिंसा, सत्य आदि चारित्र का भलीभाँति पालन न करना, उसमें दोष लगाना, उसका खण्डन करना, चारित्र विराधना है।

चारित्रवान :

□पराई वस्तु चाहे जितनी सुन्दर और आकर्षक क्यों न हो उसे देखकर यदि तुम्हारा मन तनिक भी विचलित नहीं होता है तो समझलो कि तुम चारित्रवान हो।

चाह :

□तुझे बन्धु मित्र चाहिये तो ईश्वर काफी है, साथी चाहिए तो विधाता है, मान प्रतिष्ठा चाहिए तो दुनिया काफी है; सान्त्वना चाहिए तो धर्म पुस्तक काफी है; उपदेश चाहिए तो मौत की याद काफी है, और अगर मेरा कहना गले नहीं उतरता है तो फिर तेरे लिए नरक काफी है।

चिकित्सक :

□संयम और परिश्रम मनुष्य के दो सर्वोत्तम चिकित्सक है।

चित्त :

□सप्त धातुओं से बना शरीर मन के आधीन है। हृदय क्षीण होने से धातुये भी क्षीण हो जाती है, इसलिए चित्त की प्रत्येक क्षण रक्षा करनी चाहिए। चित्त के स्वस्थ रहने से ही बुद्धि

प्रस्फुटित होती है।

चित्त की प्रसन्नता .

☐ चित्त की प्रसन्नता ही व्यवहार मे उदारता बन जाती है।

चिन्तन और चिन्ता :

☐ आवश्यक और किसी गहन विषय पर सोचना चिन्तन है। अनावश्यक भूत भविष्य का चिन्तन करना चिन्ता है।

चिन्ता

☐ चिन्ता से ही चिन्ता दूर होती है—इस धोखे से रोकने का प्रयास करने से परिणाम उलटा होता है।

☐ चिन्ता एक प्रकार की कायरता है और वह जीवन को विषमय बना देती है।

☐ मनुष्य को जिन्दा निगलने वाली डायन चिन्ता है।

☐ चिन्ता घूमती हुई कुर्सी है जो आपको ऊपर नीचे चारो तरफ घुमाती रहेगी किन्तु निश्चित स्थान पर नही पहुँचा सकेगी।

☐ चिन्ता अमरवेल के समान है। अमरवेल जिस वृक्ष पर चढती है उसका शोषण कर जाती है और स्वय पुष्ट रहती है। उसी प्रकार चिन्ता जिस पर सवार होती है वह उसी का शोषण कर उसे नष्ट कर देती है और स्वयं पुष्ट हो जाती है।

चिन्ता और चाह :

☐ चिन्ता जीवन वृक्ष का कीडा है, जो उसे अन्दर से खोखला

वनाता है। जब तक चाह नही होगी तब तक चिन्ता नहीं हटेगी। चाह और चिन्ता एक दूसरे के पूरक है।

चिन्ताजनक :

☐धन या शरीर का नाश होना उतना चिन्ताजनक नहीं, जितना चरित्र का नाश।

चुगलखोर

☐जैसे ऊँट को किसी वृक्ष के फूल-फल मे अनुराग नही होता उसे काटो का ढेर ही अभीष्ट होता है, वैसे ही गुणियों मे अनेकानेक गुणो के वर्तमान रहने पर भी चुगलखोर उनमे दोष ही ढूढता है और ग्रहण करता है।

चेतना·

☐जीवित व्यक्ति को स्वस्थ किया जा सकता है, पर जिसमे प्राण ही नही उसको क्या स्वस्थ किया जाय ?

☐सघर्षशील जीवन मे चेतना होती है, सुस्त जीवन मे मुर्दापन।

चेहरा·

☐हमारे मुखमण्डल पर हमारे अतर्हृदय की विचारणा का प्रतिबिम्ब झलकता है।

☐तुम्हारा चेहरा प्राय. कपड़ो की अपेक्षा भी अधिक मन की दशा बता देता है।

चोट ·

□जिसने तुम्हे चोट पहुचाई है वह तुम से प्रबल था या निर्बल ? यदि तुमसे निर्बल है तो उसे क्षमा कर दो यदि प्रबल है तो अपने को कष्ट न दो ।

चोर

□चोर केवल दण्ड से ही नही बचना चाहता, वह अपमान से भी बचना चाहता है । वह दण्ड से उतना नही डरता जितना अपमान से ।

छल ·

□सभी छलो मे अपने साथ किया हुआ छल प्रथम और निकृष्ट होता है ।

छिपा है ·

□यौवन मे बुढापा छिपा है, आरोग्य मे रोग छिपा है और जीवन मे मृत्यु छिपी है ।

छोटी जिन्दगी

□जिन्दगी छोटी है । मै इसे शत्रुता बनाये रखने या अपराधो की याद मे नही गुजारना चाहता ।

जडे मजबूत हो

□जिन वृक्ष की जडे मजबूत है वे भयकर झझावात मे भी खडे रहते है गिरते नही । इसी प्रकार जिस साधक का चरित्र मज-

चूत है वह विषय वासना के भयकर झझावात मे भी अडिग रहता है। पतित नही होता।

जय-पराजय .

☐सर्वत्र जय मिलेगी यह नही हो सकता। सर्वत्र पराजय होगी यह भी असम्भव है। जय-पराजय ज्ञानियो के लिए समान है। अज्ञानियो के लिए सुख-दु ख का कारण है।

जन्म और मृत्यु

☐मृत्यु से मत डरो। यह तो तुम्हे नया शरीर देने वाला है। जैसे मनुष्य जीर्ण वस्त्र का परित्याग करके नये वस्त्र धारण करता है। वैसे ही मृत्यु जीर्ण देह को छोडकर नया देह प्रदान करती है। मृत्यु का अर्थ आत्मा का नष्ट होना नही, किन्तु देह परिवर्तन है।

जागृति

☐जागृति का अर्थ है कर्म क्षेत्र मे अवतीर्ण होना और कर्मक्षेत्र क्या है ? जीवन सग्राम।

जाति भाई ·

☐ससार मे व्यक्ति को जाति भाई ही तराते है और जाति भाई ही डुबोते भी है। जो सदाचारी है, वे तो तराते है और दुराचारी डुबो देते है।

जिन्दगी

☐जिन्दगी कितनी ही वडी हो, वक्त की बर्बादी से जितनी चाहे छोटी वनाई जा सकती है।

☐कहानी की तरह, जिन्दगी मे यह देखा जाये कि वह कितनी अच्छी है न कि कितनी लम्वी है।

जिज्ञासा

☐जिज्ञासा के विना ज्ञान नही।

जितेन्द्रिय

☐तृष्णा और प्रलोभन से जो अपने आप को वचाता है वह जितेन्द्रिय है।

जिह्वा :

☐जिह्वा सरस्वती का मन्दिर है, नागदेवता का अधिष्ठान है, इसलिए उसे सदा पवित्र रखना चाहिए।

☐जीव और जिव्हा का अटूट सम्वन्ध है। जीव को सुख दुख देने मे कारणीभूत जिव्हा होती है। जिव्हा अमृत है तो विप भी है। अन्य इन्द्रियाँ शरीर के साथ-साथ कार्यहीन हो जाती है किंतु जिव्हा तो मृत्यु तक जीव का साथ देती है।

☐मनुष्य की वृद्धि और विनाश, उन्नति और अवनति, जिव्हा के आधीन है।

जीना व्यर्थ ·

□ यदि हम एक दूसरे की जिन्दगी की मुश्किलें आसान नहीं करते तो फिर हम जीते ही किसलिए हैं ?

जीभ :

□ जिसने मुँह बन्द रखा उसने अमृत पिया, जिसने जीभ को काबू में कर लिया उसने शैतान को काबू में कर लिया और जिसने शब्दों को बुहार फेंका उसने अपने दिल को काबा बना लिया ।

जीव और शिव

□ किसी भी पदार्थ के प्रति जब आत्मा ममत्व करता है तब वह जीव रूप होता है । निर्ममत्व भाव में वह शुद्धरूप शिव रूप होता है ।

जीवन

□ जीवन का ध्येय त्याग है, भोग नहीं, श्रेय है प्रेय नहीं, वैराग्य है, विलास नहीं, प्रेम है, प्रहार नहीं ।

□ महत्त्व इसका नहीं है कि हम कितने अधिक जीवित रहते हैं अपितु महत्त्व तो इसका है कि हम कैसे जीवित रहते हैं ।

□ जीवन मरने के लिए नहीं है किन्तु मौत को जीतने के लिए है ।

□ जीवन है स्वस्थ शरीर और स्वस्थ मन का स्वस्थ संयोग ।

☐ईसा का कहना है"रहो और रहने दो। जीयो और जीने दो।"

☐जीवन को मृत्यु का भय है। अत मनीषी लोग अपने जीवन को भव्य और दिव्य बनाने मे सतत प्रयत्नशील रहते है।

☐जितना अधिक जीवित रहना चाहते हो, रहो, किन्तु स्मरण रखो कि जीवन के प्रारम्भिक तीस वर्ष जीवन की अधिकाश अवधि है।

☐तुम भद्र से भद्रतर जीवन को प्राप्त करो।

वीणा के तारो को न तो इतना खीचो कि टूटने का भय बना रहे न इतना ढीला छोडो कि सगीत की स्वर लहरी न निकले। हमारा जीवन भी ऐसा ही होना चाहिए।

☐पवित्र जीवन एक आवाज है, वह तब बोलती है जब जबान खामोश होती है।

☐जीवन एक फूल है और प्रेम उसका मधु।

☐जीवन का एक क्षण भी अमूल्य है, क्यो कि वह करोड स्वर्ण मुद्रायें देने मे भी नही मिलता।

☐ससार मे सम्मानपूर्वक जीने का सबसे सरल और सुन्दर उपाय यह है कि हम जो कुछ बाहर से दिखाना चाहते हैं, वैसे अन्दर से भी दिखे अन्तर्-बाहर एकसा हो।

☐जीवन एक खेल है और मानव एक खिलाडी।

☐ मनुष्य जीवन अनुभव का शास्त्र है।

☐ जीवन किसी को स्थायी सम्पत्ति के रूप मे नही मिला। वह तो केवल प्रयोग के लिए है।

☐ जीवन अमरता का शैशवकाल है।

जीवनी

☐ प्राचीन महापुरुषो की जीवनी मे अपरिचित रहना जीवन भर निरन्तर बाल्यावस्था मे ही रहना है।

जीवन और मृत्यु

☐ जीवन एक पुष्प है जो खिलता भी है तो मुरझाता भी है। मानव जीवन मे सुख भी मिलता है तो दुःख भी। मृत्यु इन दोनो से छुटकारा देने मे समर्थ है।

जीवन का आनन्द

☐ काटो के मध्य रह कर जो मुस्कुरा सकता है, जीवन का आनन्द प्राप्त कर सकता है वही फूल बन सकता है और अपना सौरभ फैला सकता है।

जीवन का राजमार्ग :

☐ विवेक से बोलो, विवेक से चलो, विवेक से खाओ, विवेक से सोओ और विवेक से बैठो, तुम्हे पाप का बन्ध न होगा। क्योंकि विवेक ही धर्म है। विवेकशील के बन्धन भी मुक्ति के कारण हैं। यही जीवन का राजमार्ग है।

जीवन की एकरूपता

☐मानव को सतत समान रूप से व्यवहार करना चाहिए। यह नही कि वाहर कुछ और भीतर कुछ। "जहा अतो तहा बाहिं" का सिद्धान्त मानवता को प्रकट करता है।

जीवन की चंचलता

☐जीवन पानी के बुलबुले के समान और कुश की नोक पर स्थित जल-बिन्दु के समान चञ्चल है।

जीवन की परिपूर्णता

☐भावना, ज्ञान, और कर्म इन तीनो के मेल से जीवन परिपूर्ण होता है।

जीवन की परिभाषा

☐आदम नवी के मत मे जीवन एक परीक्षा का स्थल है। नूह नवी के मत मे जीवन एक अर्क है। इब्राहिम नवी के मत मे जीवन खुदा के प्रति प्रेम प्रकट करने का एक साधन है। मूसानवी के मत मे जीवन एक सग्रामस्थल है। ईसानवी के मत मे जीवन समस्त मानवो से प्रेम करने वाला साधन है।

जीवन की सार्थकता

☐प्रेममूर्ति वना रहना इसी मे जीवन की सार्थकता है।

जीवन नाटक

☐जिस प्रकार नाटक मे क्षण-क्षण मे दृश्य वदलते रहते है उसी

प्रकार जीवन रूप नाटक मे हर्ष शोक, चिन्ता, सुख-दु.ख व आनन्द के दृश्य परिवर्तित होते रहते हैं।

जीवन मे शक्ति-सम्पन्नता :

☐आत्मविश्वास, आत्मज्ञान और आत्मसयम केवल यही तीन जीवन को परम शक्ति-सम्पन्न बना देते है।

जीवन-संगीत .

☐जीवन-सगीत के दो स्वर है—एक कठोरता व दूसरी मृदुता जो व्यक्ति इन दोनो का समुचित उपयोग करना जानता है, वही जीवन का मधुरगीत गा सकता है।

जीवन्मुक्त ·

☐जीवन्मुक्त ज्ञानी, अभिमान और द्वन्द्वो से रहित होता है, आत्मा मे ही रमण करता है और वह आत्मसाक्षात्कार करता हुआ सब पर समान दृष्टि रखता है।

☐किसी भी शुभ अशुभ को याद करके, उसका स्पर्शकरके, उनको खा-करके अथवा जानकार भी जो हर्ष या दु ख का अनुभव नहीं करता वह जीवनन्मुक्त होता है।

☐सज्जन पूजा करे या दुर्जन अपमान करे, गुस्से या दु ख दे, फिर जो भी दोनो मे समभाव रखता है वही जीवन्मुक्त है।

जीवात्मा और परमात्मा

☐कर्मबद्ध आत्मा-जीवात्मा है। कर्ममुक्त आत्मा-परमात्मा है।

"पाशवद्धो भवेज्जीव पाशमुक्तो भवेत् शिव"

जीवो और मरो .

□ धर्म के लिये जीवो और धर्म के लिए मरो ।

जैन-दर्शन .

□ जैन-दर्शन न एकान्त भेदभाव को ही मानता है और न अभेद वाद को ही । वह भेदाभेदवादी दर्शन है ।

जैसा विचार वैसा जीवन

□ आपका भविष्य आपके वर्तमान जीवन के विचारो से प्रभावित है जो आप वर्तमान समय मे सोचते विचारते है, वैसे ही आप वन जायेगे । नीच विचार मनुष्य को पतन की ओर और उच्च विचार उन्नति की ओर ले जाते है । मनुष्य का जीवन विचारो का प्रतिविम्व है । एक विचारक के शब्दो मे भाग्य का अपर नाम विचार है ।

झगड़ा

□ यदि तुम झगडे का अवसर देखो तो तुरन्त वहाँ से हट जाओ क्योकि तुम्हारी खामोशी या स्थान परिवर्तन झगडे का फाटक वन्द कर देगी ।

झूठ .

□ ससार मे झूठ पापो का सरदार है, स्वार्थपरता, निर्दयता, कुटिलता और कायरता मव उसके माथी ।

□लोग झूठ बोलने वाले मनुष्य से उसी प्रकार डरते हैं जैसे सांप से। ससार मे सत्य ही सबसे महान धर्म है। वही सबका मूल कहा जाता है।

□अधर्म की सेना का सेनापति झूठ है, जहा झूठ पहुच जाता है वहाँ अधर्म राज्य की विजय-दुदुभी अवश्य बजती है।

झूठा

□झूठा कभी श्रेष्ठ पद को प्राप्त नही होता।

□झूठे से देव और मनुष्य दोनो घृणा करते हैं। झूठा अक्सर बुजदिल होता है, क्योकि वह सचाई को स्वीकार करने की हिम्मत नही करता।

ढोंगी :

□ढोंगी बनने की अपेक्षा नास्तिक बनना अधिक श्रेष्ठ है। ००

तकदीर और तदवीर :

☐तकदीर अपने स्थान पर महान है, मन्दे तकदीर को प्रकट करने के लिए तदवीर की परम आवश्यकता है।

तत्त्वसार :

☐ज्ञानी मनोज्ञ या अमनोज्ञ सभी पदार्थ से सार ग्रहण करते हैं। मधुप अर्कपुष्प (आकडे का फूल) से भी पराग ग्रहण कर लेता है।

तन्मयता :

☐तन्मयता के तीन रूप हैं—काम, भक्ति और ध्यान। स्त्री विषयक तन्मयता काम है। ईश्वर विषयक तन्मयता भक्ति है और

आत्म-विषयक तन्मयता ध्यान है।

तप :

☐सघनमेघ की घटा जैसे तीव्र वायु के वेग से बिखर जाती है वैसे ही पाप की श्रेणी तपस्या से छिन्न-भिन्न हो जाती है।

☐यदि आत्मशक्ति प्राप्त करनी है तो इच्छा का निरोध करना होगा। क्योंकि योग शास्त्र मे इच्छा निरोध को तप बताया है।

☐वही अनशन (उपवास) तप श्रेष्ठ है, जिससे कि मन अमगल न सोचे। इन्द्रियो की हानि न हो और नित्य प्रति की योग-धर्म-क्रियाओ मे विघ्न न आये।

☐अनासक्ति ही तप है।

तपसमाधि :

☐तप समाधि के चार प्रकार होते है—इस लोक के निमित्त, परलोक के निमित्त, कीर्ति, वर्ण, शब्द और लोक प्रशंसा के लिए, निर्जरा के अतिरिक्त अन्य किसी भी उद्देश्य से तप नही करना चाहिए।

तपस्वी :

☐सच्चा तपस्वी क्रोध, वैर, ईर्ष्या मात्सर्य, और अहकार रहित होता है।

तर्क और सत्य :

☐तर्क और सत्य का उल्लघन शास्त्र भी नही कर सकते।

शास्त्रो का उपयोग तर्क को शुद्ध करने और सत्य को चमकाने के लिए होता है।

तलवार :

☐तलवार मनुष्य के शरीर को झुका सकती है, मन को नही। मन को झुकाना हो तो प्रेम का अस्त्र उठाओ। प्रेम का अस्त्र अजेय है, अचूक है।

तस्कर :

☐जिसके चेहरे पर परिश्रम का स्वेद कण व ईमानदारी का धूल कण नही, वह समाज का तस्कर व लुटेरा है।

ताजा आनन्द :

☐जिस प्रकार उद्यान मे नवोदित पुष्प की सुगन्ध निराली होती है उसी प्रकार अन्तर मे उदित आनन्द की सुगन्ध भी निराली ही होती है।

तितिक्षा :

☐जिस तरह आयुर्वेदीय दवाईयाँ शतपुटी अथवा सहस्रपुटी बनने से उनकी शक्ति बढती है, उसी प्रकार तितिक्षा द्वारा श्रद्धा और आस्तिकता के साथ सब कुछ सहन करते जाने से सत्य का साक्षात्कार अधिकाधिक नजदीक आता है और सत्य की आत्मिक-शक्ति बढती जाती है।

☐क्रोध और द्वेष का दमन करने से ही जैसे अहिंसा की प्रतिष्ठा

होती है वैसे ही सहन करने की पराकाष्ठ करने से ही हमारी अहिंसा शक्ति पराकोटि को पहुँच जाती है।

☐इसीलिए अहिंसा और तितिक्षा को सत्य की एक पारमिता कहा है। हमारा शरीर और हमारी इन्द्रियाँ तो सुखदुःखादि द्वन्द्वों को सहन करेगी ही। लेकिन हमारा मन, हमारा चित्त और हमारी श्रद्धा भी द्वन्द्वों के सामने अडिग रहे यही सच्ची तितिक्षा है। जिससे बढ़कर कोई तपस्या नहीं।

तीन भूमिका :

☐ज्ञानयोग की तीन भूमिका हैं—'सोऽहं' वह मैं ही हूं। 'त्वद हं' तू भी मैं ही हूं। और 'अहमहम्' मैं, मैं ही हूं।

तीन रत्न :

☐इस पृथ्वी पर अन्न, जल और मिष्टवचन ये तीन रत्न हैं। किन्तु मूर्ख लोग पत्थर के टुकड़ो को रत्न समझते हैं।

तीन रकार :—

☐रमा, रामा व रसना इन तीन रकारों के अधीन बना मानव पापकर्मों की ओर प्रवृत्त होता है।

तीन सकार :

☐मुक्ति प्राप्त करने के लिए मानव को तीन सकार की आवश्यकता है—सद्विचार, सद्ज्ञान और समाधि।

तीन वस्तुये :

☐सत्सग, उत्तम ग्रन्थ का वाचन और प्रार्थना ये तीनो वस्तुये तीनो लोक का राज्य दिलाने मे सिद्धहस्त है। हमारा कुसग परमेश्वर से हमे दूर करवा देता हैं, उसी के कारण हम पर नाना प्रकार के कष्ट आते है।

तीन शासक :

☐तीन सरल किन्तु प्रबल, आवेगो ने मानव जीवन पर शासन किया है—प्रेम की इच्छा, ज्ञान का अन्वेषण और पीडित जीवो की असह्य वेदना से उत्पन्न करुणा।

तीर्थ :

☐जहाँ दान, विनय और शील का त्रिवेणी-सगम होता है, वही लोकप्रियता के पवित्र तीर्थ का सर्जन भी होता है।

तुच्छ .

☐जिस हृदय मे परमात्मा का चिन्तन नही है वह मनुष्य तुच्छ है।

☐जिसने पैसे के खातिर अपना ईमान बेच दिया है, उस तुच्छ व्यक्ति का चित्त कभी प्रसन्न नही रह सकता।

तुच्छ सगति .

☐तुच्छ व्यक्ति के साथ मैत्री और प्रेम कुछ भी नही करना चाहिए। कोयला यदि जलता हुआ है तो स्पर्श करने पर जला

देता है और यदि ठण्डा है तो हाथ काला कर देता है।

तुम स्वयं बनो :

□ तुम अपने आपके गुरु, वकील और वैद्य बनो।

तृष्णा :

□ डायोजिनस के लिए एक टब भी बहुत था, लेकिन एलेक्जेंण्डर के लिए सारी दुनिया भी छोटी थी।

□ हाथी का दन्तमूल एक बार बाहर निकलने के बाद पुनः अन्दर नहीं जा सकता, उसी प्रकार बढ़ी हुई आवश्यकता एक बार बढ़ने पर घट नहीं सकती।

□ तृष्णा बन्धन को पैदा करती है। तृष्णा के नष्ट हो जाने पर सब बन्धन स्वयं कट जाते हैं।

□ यदि तुम्हारे हृदय में तृष्णा की आग धधक रही है तो सन्तोष कैसे प्राप्त होगा? जहा ज्वालामुखी धधक रहा है वहा पुष्प खिलने की आशा कैसे की जा सकती है?

□ जब तक हमारे मन में चाह-तृष्णा नहीं हटेगी, तब तक चिन्ता नहीं हटेगी। तृष्णा उस उपन्यास की तरह है जो एक पृष्ठ पढ़ने पर दूसरे पृष्ठ को पढ़ने की इच्छा होती है।

□ मरुधरा में तृषार्त मृग पानी के लिए इधर-उधर भटकते हैं। पानी के अभाव में वे एक बार ही काल कवलित हो जाते हैं किन्तु संसारी जीव काम भोग की तृष्णा में बार-बार काल कव-

लित हो अनन्त ससार मे भटकते है।

□तृष्णा जीव की औरत है और इसकी तीन सन्ताने है—लोभ, मान और काम—ये तीनो दुःख की परम्परा बढाने वाली है। यदि इनका वन्ध्यीकरण किया जाय तो मानव निश्चित दु ख से मुक्त हो सकता है।

□वाहर की जलती हुई अग्नि को थोडे से जल से शान्त किया जा मकता है। किन्तु मोह अर्थात् तृष्णा रूप अग्नि को समस्त समुद्रो के जल से भी शान्त नही किया जा सकता।

तेजस्वी .

□जिधर सूर्य उदय होता है, उसी को लोग पूर्व दिशा मानते है। तेजस्वी जिधर झुकता है उधर लोक झुक जाता है, जहाँ वह रहता है वह साधारण स्थान भी तीर्थ बन जाता है।

त्याग :

□वहुजन हिताय, वहुजन सुखाय—अपनी वस्तु का कुल के लिए, कुल का ग्राम के लिए, ग्राम का प्रान्त के लिए, प्रान्त का देश के लिए एव देश का राष्ट्र के लिए त्याग कर देना चाहिए।

□जिसमे त्याग है, वही प्रसन्न है। वाकी सव गम का असवाव है।

□जिस त्याग मे सहज सुख की अनुभूति नही होती, वह त्याग नही। जव तक त्याग मे अभिमान है, उसकी स्मृति है, त्यागी

हुई वस्तु की महत्ता बनी हुई है तब तक वह त्याग स्वाभाविक नही है।

□निरपेक्ष त्याग से ही चित्त की शुद्धि होती है। चित्त की शुद्धि से ही साधक कर्म क्षय कर निर्मलात्मा बनता है।

□त्याग निश्चय ही आपके बल को बढा देता है। आपकी शक्तियो को कई गुना कर देता है। आपके पराक्रम को दृढ कर देता है, और इतना ही नही, आपको ईश्वर बना देता है। वह आपकी चिन्तायें, शोक और भय हर लेता है। आप निर्भय तथा आनन्दमय बन जाते है। त्याग है अहकार युक्त जीवन का त्याग। नि सशय और निःसन्देह अमर जीवन, व्यक्तिगत और परिच्छिन्न जीवन को खो डालने से मिलता है।

□त्याग का आरम्भ प्रिय वस्तुओ से करना चाहिए। जिसका त्याग परमावश्यक है वह है मिथ्या अहकार। अर्थात् मैंने यह किया, यह कर रहा हू, मेरे अलावा यह कार्य कौन करने वाला है। मैं कर्ता हूँ। भोक्ता हूँ यही भाव हम मे मिथ्या व्यक्तित्व को उत्पन्न करते है अत हमे ऐसे भाव का त्याग करना चाहिए। अहकार युक्त जीवन का त्याग ही सौंदर्य है।

त्याग और स्वीकार :

□जो बुराई है उसका त्याग करो, जो भलाई है उसको स्वीकार कर पालन करो।

त्यागी :

□जो भोग उपभोग की सामग्री के न मिलने पर या परवश होकर जो उनका सेवन नही करता वह त्यागी नही कहलाता। त्यागी वह है, जो प्रिय भोग के उपलब्ध होने पर भी उनकी ओर से पीठ फेर लेता है और स्वाधीनतापूर्वक भोगो का त्याग करता है।

थपथपाओ तो द्वार खुल जायेंगे

□मॉगो और वह तुम्हे मिलेगा, खोजो और तुम पाओगे। थप-थपाओ और द्वार तुम्हारे लिए खुल जायेंगे।'

थोथा चना बाजे घना

□जो व्यक्ति बकवास ज्यादा करता है, किन्तु करता कुछ नही वह व्यक्ति एक ऐसी नदी के समान है जहा रेती ही रेती है, किंतु पानी नही।

दमन :

□अच्छा यही है कि मैं सयम और तप द्वारा अपनी आत्मा का दमन करूँ। दूसरे लोग वन्धन और वध के द्वारा मेरा दमन करें—यह अच्छा नही है।

□सयम और तप से अपनी आत्मा का दमन करना अच्छा है। दूसरो के द्वारा वन्धन या वध से दमन पाना अच्छा नही।

दम्भ :

☐ लोग बातें ऐसी करते हैं मानो वे ईश्वर में विश्वास करते है, लेकिन जीते इस प्रकार हैं, मानो उनके खयाल से ईश्वर है ही नहीं।

☐ दम्भ का अन्त सदैव नाश होता है और अहकारी आत्मा सदैव पतित होती है।

दया :

☐ दाना चुगने वाली छोटी-सी चिटी को भी मत सता, क्योंकि उसमें भी प्राण है। प्राण ससार की बेहतरीन वस्तु है। अतः किसी कमजोर प्राणि को देखकर उसे सताना पाप है।

दरिद्रता :

☐ अतिथि सत्कार से इनकार करना ही सबसे बड़ी दरिद्रता है।

दरिद्रता के कारण :

☐ जूआ, मद्यपान, व्यभिचार, हिंसा, बुरे मित्रों का ससर्ग, और आलस्य ये सब ऐश्वर्य के विनाश के कारण हैं।

दर्शन विराधना :

☐ सम्यक्त्व एव सम्यक्त्वी साधक की निन्दा करना, मिथ्यात्व एव मिथ्यात्वी की प्रशसा करना, पाखण्डमत का आडम्बर देखकर विचलित होना दर्शन विराधना है।

दल नहीं, दिल देखो :

☐जनता का दल देखकर कोई काम मत करो, उनका दिल देखो।

दर्शन का ध्येय :

☐जो कुछ सत्य है उसका अन्वेषण और जो कुछ उचित है उसकी कार्य मे परिणति, ये दर्शन मे दो महान ध्येय हैं।

दाग

☐वस्त्र पर दाग चन्दन और केशर के भी पडते है और कीचड के भी। प्रथम दाग पवित्र होता है जबकि द्वितीय अपवित्र।

दान :

☐दान सत्कारपूर्वक दो, अपने हाथ से दो, मन के प्रशस्तभाव से दो, आत्म-कल्याण की भावना से दोपरहित दो।

☐अपने हाथो से तुमने जो सिक्का वृद्ध अशक्त व आवश्यकता से पीडित दरिद्र के हाथ मे दिया है वह सिक्का नही रहता वह, ईश्वरीय हृदय के साथ तुम्हारे हृदय को जोडने वाली स्वर्ण शृङ्खला बन जाती है।

☐सच्चा दान का अर्थ है ममता का त्याग। जब ममता का त्याग किया है तो फिर बदले की कामना क्यो की जाय? बदले की इच्छा मे जो दान दिया जाता है उसका फल भी अल्प मिलता है और वह दान भी अशुद्ध हो जाता है।

□प्रदीप के बुझने के बाद तैल का दान किस काम का ?

□जो कुछ मैंने दिया था वह मेरे पास अब भी है। जो कुछ व्यय किया वह विद्यमान था। जो सचित किया था वह मैंने खो दिया।

□ज्यो ही पर्स (बटुआ) रिक्त होता है, हृदय समृद्ध होता जाता है।

□परवाह नही, यदि तुम्हारे पास दान के लिए धन नही है, किन्तु अपाहिज की सेवा के लिए हाथ तो है।
परवाह नही, यदि तुम्हारे पास देने के लिए अन्न भण्डार नहीं, पर दो मीठे बोल तो दुखीजनो को दे ही सकते हो।
परवाह नही, यदि तुम सर्वथा निःस्व हो, अपने सामने कराहते मानव को अपने आँसू से, अपनी करुणा से नहला तो सकते हो।

दाता :

□याचक मर जाता है, किन्तु दाता नही मरता।

दार्शनिक :

□जब जिन्दगी को अपने दिल के गीत सुनाने के लिए गायक नही मिलता, तो वह अपने मन के विचार सुनाने के लिए दार्शनिक पैदा करता है।

दार्शनिकों से

□दार्शनिको ! ईश्वर और जगत की पहेलियों को सुलझाने के

अपेक्षा भूख, गरीवी और अभाव से पीडित जनता की समस्या को सुलझाओ। तभी आपका दर्शन जन-दर्शन वन जायेगा।

दासता

☐ जिस समय कोई व्यक्ति किसी की दासता स्वीकार करता है उसकी आधी योग्यता उसी समय नष्ट हो जाती है।

दिन और रात :

☐ तुम हसते हो, मुझे रोना आता है, तुम रोते हो मुझे हँसी आ जाती है, दिन और रात इसी को कहते हैं।

दीन

☐ विपन्नावस्था मे फँसा व्यक्ति सम्पन्न व्यक्तियो को उसी दृष्टि से देखता है जिस दृष्टि से क्षुधातुर व्यक्ति भोजन को।

दिल्लगी :

☐ जिसको लगती है उसी को लगती है, औरो को दिल्लगी सूझती हे।

दीर्घजीवन

☐ दीर्घ जीवन के लिए उतावलापन शत्रु है। विशाल आकाक्षाएँ थकावट हैं, आलस्य और निकम्मापन वीमारी है।

दीर्घायुभव ·

☐ जीवेम शरद' शतम्। वुध्येम शरद' शतम्। रोहेम शरद: शतम्। पूपेम शरद शतम्। भवेम शरद. शतम्। भूपेम शरद

शतम् । भूयसीः शरदः शतात् [अथर्ववेद १९।६७।२-८]
हम सौ और सौ से भी अधिक वर्षों तक जीवन-यात्रा करें, अपने ज्ञान को बराबर बढ़ाते रहें, उत्तरोत्तर उत्कृष्ट उन्नति को प्राप्त करते रहें, पुष्टि और दृढ़ता को प्राप्त करते रहें, आनन्द-मय जीवन व्यतीत करते रहें, और समृद्धि, ऐश्वर्य तथा सद्गुणों से अपने को भूषित करते रहें।

दीक्षा :

□ घास और सोने में जब समान बुद्धि रहती है, तभी उसे दीक्षा कहा जाता है।

दुःख :

□ मनुष्य का सच्चा जीवन दुःख में खिलना है। दुःख मनुष्य के विकास का साधन है। सोने के तपाने से निखरना है। मनुष्य की सच्ची प्रतिभा दुःख में ही निखरती है।

□ दुःख ही लोगों को कृपालु बनाता है और दूसरों पर दया करना सिखाता है।

□ आसक्ति से बढ़कर दुःख नहीं और अनासक्ति से बढ़कर सुख नहीं।

□ सबसे सुन्दर मुकुट पृथ्वी पर सदैव कण्टकों का रहा है और कण्टकों का ही रहेगा।

□ दुःख वर्षा की धारा की भांति कीचड़ उत्पन्न करता है, किन्तु

गुलाव के फूल भी खिलाता है ।

दुःख का कारण

□सचय ही दु ख का कारण है, उत्सर्ग और समर्पण ही आनन्द का राजमार्ग है ।

दुःख की परिभाषा :

□दु ख की सक्षिप्त व्याख्या मात्र इतनी ही है—अभाव का अनुभव और मनोवाछित की अप्राप्ति ।

दु.ख मुक्ति :

□वस्तुमात्र की उपलब्धि मे तीन प्रकार का दु.ख भरा हुआ है—प्राप्त करने का दु ख, प्राप्त करने के बाद उसकी रक्षा का दु.ख, और खोने का दुःख । अपनी आवश्यकतानुसार कमाने वाला अन्तिम दो दु खो से मुक्ति प्राप्त कर सकता है ।

दु.खनान्द :

□दु.ख मे सुख कब मिलेगा ? यदि दु.खी व्यक्ति को सुखी मिलता हैं तो दु.ख की मात्रा मे वृद्धि करता है । यदि दुःखी को दुःखी मिलता है तो सुख मे अभिवृद्धि होती है । सोचता है दुनिया मे केवल मै अकेला ही दुःखी नही हू और भी दुःखी है ।

दु.खानुभव

□जिस मानव ने एक बार भी दुःख का अनुभव नही किया है वह भी बेचारा अभागा है । दुःख का अनुभव होने पर हृदय

कोमल होना है। मिठाई के साथ नमकीन भी चाहिए। सुख के साथ दुःख भी चाहिए।

□आत्मा में अनन्त सुख है। उसे बाहर खोजने की आवश्यकता नहीं। उसे भीतर ही प्राप्त कर सकते हैं। ज्ञानस्वभावी आत्मा को भूलकर मोह, राग, द्वेष आदि विकारी भावों का वहन करने से ही हम दुःखानुभव करते हैं।

दुःखी :

□जो असंतुष्ट रहता है वह संसार का सबसे बड़ा दुःखी व्यक्ति है।

□मनुष्य वहीं तक दुःखी है, जहाँ तक वह अपने को ऐसा मानता है।

□संसार के दुखियों में पहला दुःखी निर्धन, दूसरा जिसे किसी का ऋण चुकाना हो, तीसरा जो सदा रोगी रहता हो और सबसे दुःखी वह पुरुष है जिसकी पत्नी दुष्टा हो।

दुःख का मूल :

□राग और द्वेष कर्म के बीज हैं। कर्म मोह से उत्पन्न होता है और वह जन्म-मरण का मूल है। जन्म-मरण को ही दुःख का मूल कहा गया है।

दुनिया विचित्र है :

□जो स्वयं न सुन कर दुनिया को सुनाना चाहता है, दुनिया

उससे सुनना नही चाहती। जो सुनना चाहते हुए भी सुनाना नही चाहता दुनिया उससे सुनने के लिए लालायित रहती है। दुनिया कितनी विचित्र है।

दुराग्रही :

☐ दुराग्रही लोग अपने कुएँ का खारा पानी पीते हुए भी दूसरे कुए का मीठा पानी नही पीना चाहते।

दुर्जन

☐ दुर्जन दूसरो के सुई के अग्रभाग जितने दोप भी देखता है, किन्तु अपने पर्वत जितने बडे दोषो को देखता हुआ भी अनदेखा कर देता है।

दुर्जन विजय :

☐ छिद्रान्वेषी दुर्जन को मौन रखकर जीत सकते हो, बोलने से हार जाओगे।

दुर्जन संगति :

☐ दुर्जन की सगति करने से सज्जन का भी महत्व गिर जाता है, जैसे कि मूल्यवान माला मुर्दे पर डाल देने से निकम्मी हो जाती है।

दुर्जन-स्वभाव .

☐ दुर्जनो का स्वभाव चलनी के समान होता है जो दोपरूप चोकर आदि अपने पास रख लेती है और गुणरूपी आटे आदि

को अलग गिरा देती है।

दुर्जय

□क्रोध अत्यन्त दुर्जय शत्रु है। लोभ असाध्य रोग है। समस्त प्राणियों पर मैत्री भावना रखने वाला साधु पुरुष है। दयाहीन मानव पशु है, असाधु है।

दुर्लभ अंग :

□इस संसार में प्राणियों के लिए चार परम अंग दुर्लभ हैं— मनुष्यत्व, श्रुति, श्रद्धा, और संयम में पराक्रम।

दुर्बलता :

□दुर्बलता शारीरिक दृष्टि से हानिकारक है तो मानसिक दृष्टि से भी हानिकारक है। दुर्बल शरीर और मन में अनेक रोगों का एवं पाप वासनाओं का निवास रहता है।

दुर्वचन :

□लोहमय कांटे अल्पकाल तक दुःखदायी होते हैं और वे भी शरीर से सहजतया निकाले जा सकते हैं, किन्तु दुर्वचनरूपी कांटे सहजतया नहीं निकाले जा सकने वाले, वैर की परम्परा को बढ़ाने वाले और महाभयानक होते हैं।

दुष्शल्य :

□पश्चात्ताप के बीज जवानी में राग-रंग द्वारा बोए जाते हैं, लेकिन उनकी फसल बुढ़ापे में दुःख-भोग द्वारा काटी जाती है।

दुष्ट :

☐दुष्ट को मारना सहज है, किन्तु उसको सुधारना सहज नही ।

दुष्ट शिष्य

☐जैसे दुष्ट बैल चाबुक आदि के वार-वार प्रहार होने पर गाडी को वहन करता है, वैसे ही दुर्बुद्धि सेवक या शिष्य मालिक या आचार्य के वार-बार कहने पर कार्य करता है ।

दुष्परिणाम :

☐यदि तुमने गेद को दिवाल पर मारा तो वह प्रत्यावर्तित होकर तुम्हारे पास ही आवेगा । यदि तुमने महापुरुष पर धूल फेकने का प्रयत्न किया है तो वह धूल प्रत्यावर्तित होकर तुम्हारी ही आखो मे पडेगी ।

देखना :

☐सर्वसाधारण लोग आख से देखते है, मन (मनन-चिन्तन) से नही देखते ।

देवता :

☐जो समस्त मानव जाति को अपनेपन से ओत-प्रोत देखते हैं वे देवता है ।

द्वेष :

☐जो हम से द्वेष करता है, वह अपनी आत्मा से ही द्वेष करता है ।

दृढनिश्चयी :

□जिसका निश्चय दृढ और अटल है वह दुनिया को अपने सांचे में ढाल सकता है।

दृढप्रतिज्ञ :

□अपनी प्रतिज्ञा को दृढता से पालन करने वाले वीर पुरुष के लिए पृथ्वी आंगन की वेदी के समान है, समुद्र एक नाली के समान है, पाताल-समतल भूमि के समान है और सुमेरु पर्वत बांबी के समान है—अर्थात् उसके लिए कठिन से कठिन कार्य भी अति सरल हो जाते हैं।

दृढ़संकल्प :

□"देह पातयामि वा कार्यं साधयामि"

इस दृढ संकल्प के बल से ही मनुष्य सफलता के उच्चतम शिखर पर पहुंच सकता है।

दृष्टि :

□ भला बुरा एकान्त न कोई,
देखो जगमें आंख पसार।
अखिल सृष्टि गुण दोषमयी है,
किस पर करिये द्वेष और प्यार॥

दृष्टि-और-सृष्टि :

□जब दृष्टि बदलती है तब सृष्टि भी बदलती है, किन्तु उसमें

दृष्य-पदार्थों मे कोई परिवर्तन नही आता ।

दृष्टिभेद :

☐एक ही वस्तु अधिकारी के भेद से अनेक प्रकार की दृष्टि-गोचर होती है, जैसे एक ही स्त्री पुत्र के लिए माता, पिता के लिए पुत्री और पति के लिए पत्नी हो जाती है ।

☐नाना व्यक्ति एक ही वस्तु को नाना प्रकार से देखते है । इस दृष्टि-भेद से ही सघर्ष उत्पन्न होता है । दृष्टा की दृष्टि का समन्वय होने पर सघर्ष का नाम शेप रह जायेगा ।

देखकर बैठो :

☐सभा, समाज, मे अपनी इज्जत पद और उम्र के अनुसार पहले ही से अपना स्थान देखकर बैठो ।

देवाधिदेव :

☐जो विकारो का दास है, वह पशु है । जो उन्हे जीत रहा है, वह मनुष्य है । जो अधिकाश जीत चुका है, वह देव है और जो सदा के लिए जीत चुका है, वह देवाधिदेव हे ।

देवो न जानाति :

☐राजा का चित्त, कृपण का वित्त, दुर्जनो का मनोरथ, स्त्रियों का चरित्र और पुरुपो का भाग्य—इनको देवता भी नही जान सकते तो मनुष्य की क्या विसात !

देश का पतन :

☐जिस देश के व्यक्ति चारित्रहीन व्यक्तियो को प्रतिष्ठा देते है, उसे अपना नेता मानते है, उस देश का पतन अवश्यभावी है।

देश की पहचान :

☐किसी भी देश के अच्छे-बुरे उन्नत-अवनत होने की तुलना उसके वैभव एव भौतिक-शक्तियो से नही की जा सकती, किन्तु वहाँ के रहने वाले मनुष्य के चरित्र की ऊंचाई और जीवनपद्धति के आधार पर की जाती है।

देशभक्त :

☐फौलाद टूट जाता है, लोहा झुक जाता है पर देशभक्त न टूटने की चिन्ता करता है न झुकने के लिए प्रस्तुत होता है।

देह की सफलता :

☐देह की सफलता उसको हट्टाकट्टा बनाने मे नही, किन्तु दीन-दुखियो की सेवा मे लगा देने मे है।

द्वेषाग्नि .

☐द्वेषाग्नि यह एक ऐसी अनोखी अग्नि है जो अन्य को जितनी मात्रा मे जलाती है उससे कही अधिक द्वेषी को जलाती है।

दैवी सिद्धान्त :

☐परिश्रम हमारे जीवन का दैवी-सिद्धान्त है और आलस्य मृत्यु।

दो महान शक्तियाँ :

☐ससार मे दो महान शक्तियाँ हैं—एक तलवार की तो दूसरी कलम की, किन्तु तलवार की शक्ति हमेशा कलम की शक्ति के सामने पराजित हुई है।

दो विरोधी तत्त्व :

☐हिसा मृत्यु है, अहिसा जीवन। हिसा पशुवल है तो अहिसा मनुष्यवल, हिसा आसुरी-सम्पत्ति है तो अहिसा-दैविक सम्पत्ति।

दोष :

☐सवसे वडा दोष किसी दोप का भान नही होना है।

☐दूसरे के दोष को वताकर स्वय निर्दोष वनने का प्रयत्न करना मूर्खता है।

☐कीचड और कूडा अपने पर डालकर अपने को स्वच्छ समझना वडी अज्ञानता है।

☐जव तक तुम्हारे मे दोप होगे तव तक अन्य मे भी दोप दिखाई देगे।

दोष-सग्रह

☐दोप को छिपाने मे उसके सग्रह की इच्छा होती है।

दोपान्वेषण :

☐दूसरे के दोपो को देखने वाला व्यक्ति (देखकर प्रकट करने वाला) अपने मे रहे हुए उन-उन दोपो को ही प्रकट कर रहा है।

दोषारोपण :

☐ जो धर्मात्मा गुणीजनो पर मिथ्या दोषारोपण करता है, वह स्वयं पतित होता है और दूसरे को भी पतित बनाता है।

दोषी :

☐ वस्त्र के सैकडो प्रावरणो के द्वारा भी प्रभात के स्वर्णिम आलोक को ढका नही जा सकता। दोषी सैकड़ों उपायो के बावजूद भी अपने दोषो को प्रकट होने से नही रोक सकता।

दोस्ती किससे ?

☐ पैसे उसी से उधार लो जो तुमसे अधिक श्रीमन्त हो। मित्रता उसी से करनी चाहिए जो गुणो से श्रीमन्त हो।

द्रव्य :

☐ द्रव्य का लक्षण सत् है, और वह सदा उत्पाद, व्यय एवं ध्रुवत्व-भाव से युक्त होता है।

द्रष्टा :

☐ जो त्रुटियो की उपेक्षा करके अन्दर में सौन्दर्य को देखता है, कमियों की उपेक्षा करके विशेषताओं पर ध्यान देता है, वही वास्तव में द्रष्टा है, उसी के पास देखने की सच्ची कला है। वह जीवन की हर स्थिति में प्रसन्न रह सकता है।

धन :

☐ धन अथाह समुद्र है जिसमें इज्जत अन्तःकरण और सत्य [illegible]

सकते है ।

☐धन से धन की भूख वढती है, तृप्ति नही होती ।

☐धन से ऐश्वर्य मिल सकता है, किन्तु सच्चा प्रेम नही । धन दौलत से मित्र मिल सकते है, किन्तु हितचितक नही । धन से भौतिक सुख मिल सकता है, आध्यात्मिक सुख नही ।

☐धन मूर्ख व्यक्ति का पर्दा है जो उसकी कमिया ससार की नजरो से छिपाये रखता है ।

☐धन खाद की तरह है, जब तक फैलाया न जाये, बहुत कम उपयोगी है ।

☐धन सुख को खरीद नही सकता, किन्तु आराम मे दु.खी बनाने मे सहायक वनता है ।

धनवान ·

☐ससार मे वही वडा धनी है जिसका यश निर्मल है ।

धनिक का रज .

☐उस धनिक का रज जिसे कोई नही लेता, उस भिखारी के दु ख से ज्यादा है जिसे कोई नही देता ।

धन्य :

☐धन्य है वो लोग जिनकी प्रसिद्धि उनकी सत्यता से अधिक प्रकाशमान नही होती ।

धर्म :

□धर्म प्रजा का मूल है।

□यदि मनुष्य धर्म की उपस्थिति में इतना दुष्ट है तो धर्म की अनुपस्थिति में उसकी क्या दशा होती ?

□सम्पूर्ण विश्व मेरा देश है, सम्पूर्ण मानवता मेरा बन्धु है और भलाई करना ही मेरा धर्म है।

□"तिन्नाण तारयाण"

धर्म तिरता है और तारता है।

□आत्मा में रहे हुए सद्गुणों को प्रकट करने वाला एक मात्र धर्म ही है। धर्म मनुष्य से देवता बनाने में सहायभूत होता है।

□'धर्म' भव समुद्र को पार करने वाली नौका है। उसपर बैठकर ही हम पार हो सकते हैं, उसे पकड़ रखने से नहीं।

□सूर्य के प्रकाश की तरह धर्म सब के लिए प्रकाशदायी है। सूर्य के प्रकाश पर किसी का स्वामित्व नहीं, किन्तु उपयोग हर कोई कर सकता है। यही बात धर्म के लिए भी है।

धर्म और कर्त्तव्य

□धर्म जब तक कर्त्तव्य के साथ और कर्त्तव्य धर्म के साथ नहीं चलता, तब तक धर्म जीवन की कला नहीं बन सकता, और न कर्त्तव्य जीवन का आदर्श हो सकता है।

धर्म का रहस्य :

☐धर्म के सारभूत तत्त्वो को सुनो, सुनकर उसे हृदय मे धारण करो और जो व्यवहार अपने को प्रतिकूल लगे अनुकूल न लगे वैसा व्यवहार अन्य के प्रति मत करो—यही धर्म का सर्वोत्तम रहस्य है।

धर्म-जागरण .

☐जो साधक रात्रि के पहले और पिछले प्रहर मे अपने-आप अपना आलोचन करता है—मैने क्या किया ? मेरे लिए क्या करना शेष है ? वह कौनसा कार्य है जिसे मैं कर सकता हूँ, पर प्रमादवश नही कर रहा हूँ ? यह चिन्तन मनुष्य के उत्कर्ष मे वडा सहायक होता है ।

धर्म का मूल :

☐धर्म का मूल सम्यक्श्रद्धा है ।

धर्म की खोज :

☐आज सारा ससार धर्म को ढूढने के लिए विश्व का कोना-कोना छान रहा है, तीर्थ, मन्दिर, शास्त्र-पुराण आदि मे धर्म खोजता है, किन्तु जहाँ अपने भीतर धर्म का अपार सागर भरा हुआ है उसे कभी खोजने का प्रयत्न नही किया इसी से धर्म प्राप्त करने मे वह असमर्थ रहा ।

धर्म की दुर्लभता :

☐सुन्दर स्त्री, आज्ञाकारी पुत्र तथा सम्पत्ति का पाना सहज है

किन्तु सद्धर्म की प्राप्ति सहज नही।

धर्म क्षेत्र

☐अन्य क्षेत्र मे किया हुआ पाप, पुण्यक्षेत्र मे आने से नष्ट हो जाता है, किन्तु पुण्यक्षेत्र मे किया हुआ पाप वज्रमय बन जाता है।

धर्मप्रकाश :

☐शुभ चिन्तन, शुभ सकल्प व उत्तम चरित्र से विश्व के दुष्ट तत्त्वो का विनाश होता है और धर्म का प्रकाश फैलता है।

धर्मवृक्ष :

☐धर्मवृक्ष की गहरी छाया मे बैठने वाले मनुष्यो के दुःख विमुक्त हो जाते हैं, सुख समीप आता है, हर्ष बढता है, विषाद नष्ट हो जाता है और सम्पदाएँ आकर उसके पद चूमती है।

धर्माचरण :

☐जब तक वृद्धावस्था नही आती रोगरूपी अग्नि देहरूपी झोपडी को नही जलाती, इन्द्रियों की शक्ति क्षीण नहीं होती है तब तक आत्महित के लिये धर्म का आचरण कर लो।

☐जीवन बीत रहा है, आयु अल्प है। वृद्धावस्था से बचने का कोई उपाय नही है। मृत्यु प्रतीक्षा मे खडी है। इन सब भयो को देखते हुए हमे इन सब भयो से मुक्ति दिलाने वाले धर्म का आचरण कर लेना चाहिए।

धर्म-द्वीप :

□जरा और मृत्यु के वेग से वहते हुए प्राणियो के लिए धर्म-द्वीप, प्रतिष्ठा, गति और उत्तम शरण है ।

ध्येय

□ध्येय जितना महान होता है, उसका रास्ता उतना ही लम्बा और बीहड होता है ,

□महान ध्येय का मौन मे ही सर्जन होता है ।

धर्मात्मा

जिसका जीवन सद्‌गुणो से अलकृत है वही सच्चा धर्मात्मा है ।

धर्माधर्म :

□न्याययुक्त कार्य धर्म है, अन्याययुक्त कार्य अधर्म ।

धर्मानुष्ठान

□जगत् विजेता सिकन्दर दुनिया से जव चला तो उसके दोनो हाथ खाली थे । उससे यह भी नही हो सका कि विजित-प्रदेश को देकर मौत को लौटा देता । ससार के सभी प्राणी खाली हाथ चले गये, किन्तु साथ मे कुछ भी नही ले गये । यह सोचकर हमे धर्म का अनुष्ठान करना चाहिए ।

धीर .

□धीर पुरुष न्याय-मार्ग से कभी विचलित नही होते ।

घुन :

□धन से बड़ी चीज धुन है।

धुआँ :

□हम जानते है आग के पहले धुआ निकलता है। अच्छे कार्य के साथ बुरा भी एक पहलू है। मानव को चाहिए कि आग को तेज कर दे ताकि धुआ दृष्टि पथ मे न आये। बुराइयाँ असीम हो और अच्छाइयाँ असीम।

ध्रुव :

□गुण का नाश नही होता, किन्तु निमित्त पाकर उसमें परिवर्तन हो जाता है।

ध्रुव संकल्प :

□मनुष्य स्नेह से, द्वेष से अथवा भय से जिस किसी मे भी सम्पूर्णरूप से अपने चित्त को लगा देता है, अन्त में वह तद्रूप हो जाता है।

धैर्य :

□नीति मे निपुण पुरुष निन्दा करे या स्तुति करे, लक्ष्मी प्राप्त हो अथवा चली जाय। चाहे आज ही मरण हो जाये और चाहे युग के बाद हो, किन्तु धीर मनुष्य न्याय-मार्ग से विचलित नही होते।

□धैर्य कड़वा है, किन्तु उसका फल मीठा है।

धोखा :

□जो यह कल्पना करता है कि वह दुनिया के बिना अपना काम चला लेगा, अपने को धोखा देता है, लेकिन जो यह समझता है कि दुनिया का काम उसके बिना नही चल सकता और भी बडे धोखे मे है।

□धोखा खाना अच्छा है, पर धोखा देना बुरा है।

ध्यान

□जिसकी कथनी करनी मे समानता है, वही ध्यान मे स्थिर रह सकेगा। जिसके आचार-विचार मे विषमता है वह ध्यान मे स्थिर नही हो सकता। सरल-मार्ग मे लडखडाकर चलने वाला विपम-मार्ग को कैसे लाँघ सकता है ?

□मानव! जव तू प्रार्थना मे तल्लीन होता है तो अपने आपको भूल जा। अपने अस्तित्व को ईश्वर के चरणो मे लगा ले। ईश्वर को धन्यवाद दो कि उसने अपने को प्रार्थना के योग्य वनाया है। पवित्र मन से ईश्वर का ध्यान करना ही सन्यास है

□अप्रमत्तभाव से ध्यान करने वाला साधक विपुल आत्मसुख को प्राप्त करता है।

ध्यान मत दो :

□यदि तुम बुरे नही हो फिर भी तुम्हे कोई बुरा कहता है तो उसका दु ख नही मानना चाहिए। जो वस्तु जिसके पास है वही

तो वह देगा। श्वेतचन्द्र को काला कहने से वह कभी काला नही बन सकता।

□तुच्छ व्यक्तियो को मुह मत लगाओ और न उनके वाक्बाणो पर ही ध्यान दो वरना अपमान का भागी बनना पड़ेगा।

ध्वंस और निर्माण :

□ध्वस का काम सरल है, निर्माण का काम कठिन। कैंची जितनी तेजी से कपडा काटती है, सुई उतनी तेजी से उसे जोड नही सकती। निर्माण मे अनेक विघ्न है, ध्वस मे कोई कठिनाई नही होती।

नकल :

□सन्यास की नकल की जा सकती है पर वैराग्य नही आ सकता। सैनिक की नकल की जा सकती है पर शौर्य नही लाया जा सकता। सूर्य का चित्र बनाया जा सकता है। पर उसमे प्रकाश नही लाया जा सकता।

नकली मोती :

□आचारहीन विचार नकली मोती है, जिसकी चमक अप्राकृतिक और अस्थिर होती है।

नम्रता :

□अपनी नम्रता का घमण्ड करने से अधिक निन्दनीय और कुछ नही है।

☐तब हम महानता के निकटतम होते हैं जब हम नम्रता मे महान होते है ।

☐उडने की बजाय जब हम झुकते है तब बुद्धि के अधिक निकट होते है ।

☐नम्रता की मिठास, मिठाई से भी अधिक मीठी होती है ।

☐नम्रता से काम बनता है और उग्रता से काम विगडता है। घडे कोमल मिट्टी से ही वनते है, कठोर मिट्टी सें नही ।

☐नम्रता व्यक्ति के व्यक्तित्व को प्रकट करती है ।

☐वृक्ष फल आने पर नीचे झुक जाता है । वादल जल भरने पर नीचे आ जाते है । वैसे ही मेधावी ज्ञान पाकर विनम्र हो जाता है ।

नरक .

☐सासरिक वैभव और सत्ता के पीछे पागल होकर जो दूसरो का वुरा चाहता है और उसका अहित करने का प्रयत्न करता है, उसका जीवन नरक वन जाता है ।

☐खराव अन्तःकरण की यातना जीवित आत्मा का नरक है ।

☐जहाँ क्रोध, द्वेप, वैर, घृणा और ईर्ष्या की वैतरनी बहती हो, वही नरक है ।

नरक के स्थान :

☐अतिक्रोध, कठोर-वाणी, दरिद्रता और स्वजन-कलह ये

साक्षात् नरक के स्थान है।

नशा :

☐नशे की हालत तात्कालिक आत्महत्या है, जो सुख वह देती है केवल नकारात्मक है, दुःख की क्षणिक विस्मृति।

नाता :

☐भाई बहन का नाता एक उदात्त, सरल और सुलभ नाता है। किसी को भाई या बहिन कहकर पुकारने में समाज या परिस्थिति की कोई दिवार सामने नहीं आती। पर जहां जीवन-संगिनी बनने का प्रश्न उठता है वहा तो समाज और परिस्थिति के पग-पग पर संघर्ष हैं।

नादानी :

☐मनुष्य तो कितना नादान और मूर्ख है, वह एक छोटा सा कीडा भी नहीं बना सकता, किन्तु दर्जनों देवताओं का सर्जन कर डालता है।

नाम :

☐खोया हुआ सुयश कदाचित ही पुनः मिलता है—जब चरित्र का पतन होता है तब सब कुछ खो जाता है और जीवन का बहुमूल्य रत्न सदैव के लिए चला जाता है।

☐गुण रहित नाम निरर्थक होता है।

☐नाम में क्या है ? जिसे हम गुलाब कहते हैं, वह किसी और

नाम से भी वैसी ही सुगन्धि देगा ।

नाम-स्मरण

☐नाम-स्मरण जन्म और मृत्यु को नष्ट कर देता है ।

☐नीबू, इमली के स्मरण-मात्र से ही मुह मे पानी आ जाता है । उसी प्रकार भगवान का नाम स्मरण करने से हमारे सब पाप विलीन हो जाते है ।

☐विकार से बचने का अमोघ उपाय प्रभु नाम है, पर नाम कठ से नही, हृदय से निकलना चाहिए ।

न्यायालय

☐ससार का इतिहास ससार का न्यायालय है ।

न्याय

☐ ससार मे झूटी तर्कों का आदर होता है और न्याय पैसो के मोल बिकता है ।

नारी .

☐नारी की करुणा अन्तर्जगत का उच्चतम विकास है, जिसके बल पर समस्त सदाचार ठहरे हुए है ।

☐नारी के जीवन का सन्तोष ही स्वर्णश्री का प्रतीक है ।

☐पुरुष मे नारी के गुण आ जाते है तो वह महात्मा बन जाता है और नारी मे पुरुष के गुण आ जाते है तो वह कुलटा बन जाती है । सचमुच ही जब तक नारी मे ममता, समता, त्याग

और सेवा की धारा प्रवाहित है तब तक संसार मे मानवता भी जीवित है ।

☐सूर्य का ग्रहण दिन मे होता है और चन्द्रमा का ग्रहण रात्रि मे, किन्तु नारी-पुरुष का सदा ग्रहण है ।

☐पति के लिए चरित्र, सन्तान के लिए ममता, समाज के लिए शील, विश्व के लिए दया, जीवमात्र के लिए करुणा सजोने वाली प्रकृति का ही नाम नारी है ।

☐कल की आदर्श नारी मोमबत्ती की तरह थी, जो खुद जलती थी पर दूसरो का प्रकाश देती थी ।

आज की स्त्री जुगुनूं की तरह है, जो इधर-उधर उडती हुई अपनी चमक दिखाकर समाज मे सभ्रम पैदा करती रहती है ।

☐शृंगार-प्रसाधन और सौंदर्य-प्रदर्शन की इस भयंकर बाढ मे बहती हुई नारी ने अपने को नही सम्भाला तो उसकी ज्ञान-विज्ञान और जनसेवा के क्षेत्र मे होने वाली प्रगति अवरुद्ध हो जायेगी । आर्थिक बोझ से सुखमय ससार दुःखमय बन जायगा । संयम और सदाचार की जगह रोमास और उच्छृंखल आचरण ले लेगा ।

नारी का आभूषण :

☐नारी का आभूषण शील और लज्जा है । बाह्य-आभूषण उसकी शोभा नहीं बढा सकते ।

निकृष्टव्यक्ति :

□ससार मे सबसे निकृष्ट व्यक्ति कौन है ? जो अपना कर्त्तव्य जानते हैं, लेकिन पालन नही करते ।

निखार कब ?

□कमल कीचड मे खिलता है, हीरा पत्थरो मे मिलता है और मानव कठिनाइयो मे ही निखरता है । अत हे मानव ! तू कठि-नाईयो से मत घबरा ।

निन्दा

□निन्दा से सामने वाले की वदनामी होगी या नही, इसका निर्णय तो भविष्य ही करेगा, किन्तु निन्दा करने वाले की जीभ अवश्य गन्दी होगी यह सुनिश्चित है ।

निन्दा और प्रशसा :

□निन्दा या प्रशसा करना मानव का स्वभाव है । किन्तु निन्दा या प्रशसा किसकी करना, यह नही जानता । यदि निन्दा ही करनी हो तो अपनी करो और प्रशसा ही करनी हो तो दूसरो की । क्योकि अपनी निन्दा से आत्मा उज्जवल वनती है और पर-प्रशसा से आत्मउन्नत ।

निन्दा-समभाव :

□मेरी निन्दा से यदि किसी को सन्तोष होता है, तो बिना प्रयत्न के ही मेरी उन पर कृपा हो गई, क्योकि श्रेय के इच्छुक

पुरुष तो दूसरो के सन्तोष के लिए अपने कष्टोपार्जित धन का भी परित्याग कर देता है। मुझे तो कुछ करना ही नही पड़ा।

निमित्त :

□"निमित्ताऽभावे नैमित्तिकस्याऽभाव."

निमित्त का नाश होने पर नैमित्तिक का नाश स्वयमेव हो जाता है, कषाय के निमित्त का नाश होने पर कषाय स्वयमेव नष्ट हो जाता है

नियम :

□अत्यन्त शिष्ट नियमो का पालन प्रायः कम ही होता है, जबकि अत्यन्त कठोर नियमो का उल्लघन बहुत कम होता है।

निराश्रव .

□जिस साधक का किसी भी द्रव्य के प्रति राग, द्वेष, और मोह नही है, जो सुख दुख मे समभाव रखता है, उसे न पुण्य का आश्रव होता है और न पाप का।

निराशा :

□निराशावादी स्वभाव से ही मन्द, निष्ठुर और शंकालु होते है।

निर्दोष आजीविका :

□जिस प्रकार भ्रमर द्रुम-पुष्पो से थोड़ा-थोड़ा रस पीता है, किसी पुष्प को म्लान नहीं करता और अपने को तृप्त करता है। उसी प्रकार व्यापारी ग्राहकों से थोड़ा-थोड़ा लाभ लेता है,

किन्तु उनका शोषण नही करता ।

निर्भय :

☐निर्भय बनने का महामंत्र है—अवैरवृत्ति ।

☐जो धीर, अजर-अमर, सदाकाल तरुण रहने वाले आत्मा को जानता है, वह कभी मृत्यु से नही डरता ।

निर्माण :

☐कल किसने देखा है, आवेगा या नही? वर्तमान से भविष्य का निर्माण कर ।

निर्लज्ज

☐सबसे अधिक निर्लज्ज वही है जो ईश्वर को नही मानता ।

निर्वाण :

☐सम्पूर्ण कर्मो का क्षय ही निर्वाण है ।

निष्कारण प्रेम और वैर

☐जिस प्रकार किसी से निष्कारण वैर हो जाता है उसी प्रकार निष्कारण प्रेम भी होता है । जितना निष्कारण वैर अधम कोटि का है उतना ही निष्कारण प्रेम उच्चकोटि का है ।

निष्क्रियता :

☐ससारी आत्मा कर्मों से आवद्ध होने के कारण मन, वचन, व काययोग से युक्त है । योग मे क्रिया होती ही है । जब तक योगो का सम्बन्ध रहेगा तब तक कोई भी व्यक्ति भले ही तेरहवें

गुणस्थान मे क्यो न पहुँच गया हो, निष्क्रिय नही हो सकता।

निश्चय :

□"देह पातयामि वा कार्य साधयामि"

इस निश्चय के बल पर ही आत्मा परमात्मा बनने के लक्ष्य तक पहुच सकता है।

निःस्वार्थ :

□नि स्वार्थता ही धर्म की कसौटी है। जो जितना अधिक नि.स्वार्थी है वह उतना ही अधिक आध्यात्मिक और शिव के समीप है।

निःस्वार्थ प्रेम :

□निस्वार्थ प्रेम पराये को भी अपना बना देता है।

नीयत :

□जिसकी नीयत अच्छी नही होती, उससे कभी कोई महत्कार्य सिद्ध नही होता।

नीति :

□नीति-शास्त्र ही इस भूमण्डल का अमृत है, यही उत्तम नेत्र है और यही श्रेय प्राप्ति का सर्वोच्च उपाय है।

□नीति धर्म की दासी है। धर्म पालन के लिए मनुष्य को नीतिमान होना चाहिए और आजीवन नीतिपथ न छोड़ना चाहिए।

प

पंगु कम, अन्धे ज्यादा .

□जो जानते हुए भी गलत मार्ग पर चलते है, वे अन्धे है, देखते हुए भी मार्ग का अतिक्रमण नही कर सकते, वे पगु है। वैज्ञानिको का यह कथन सही है—पगु कम और अन्धे ज्यादा है।

पछतावा :

□सन्मार्ग पर चलने वाला कभी पछातवा नही करता। पछतावा करता है, विपम मार्ग पर चलने वाला राही।

पडित

□जिसके काम मे शीत-उष्ण, भय-प्रेम, धन, तथा दारिद्रय बाधक नही होते, वही पडित कहलाता है।

□जो पाप से डरता है वह पंडित है।

पंडित और ज्ञानी :

□पण्डित सर्वशास्त्रो का अध्येता होता है, ज्ञानी है, ज्ञानी उस शास्त्र के अनुसार चलता है।

पड़ोसी :

□पडौसी से प्रेम करने वाला विपत्ति मे भी सुखी रहता है, जब की पड़ौसी से वैर ठानने वाला सम्पत्ति मे भी दुःखी होता है।

पति-पत्नी :

□पति और पत्नी एक ही जुए मे जुते हुए दो घोडो के सदृश है। इन दोनो मे पूर्ण सौहार्द और प्रेम का होना आवश्यक है।

पति-पत्नी का नियम

□विवाह के समय पति पत्नी के मध्य एक समझौता होता है। पति यदि क्रोध मे आजाये तो पत्नी को चाहिए कि वह मौन रखे आग मे घी का काम न करे। पत्नी यदि क्रोधित हो जायें तो पति प्रेम मे उसे शान्ति का पाठ पढायें, दोनो यदि इस समझौते का पालन करें तो उनके लिए संसार स्वर्ग बन जायेगा।

पत्नी :

□सुयोग्य पत्नी परिवार की शोभा तथा गृह की लक्ष्मी है।

पदवी :

☐सद्गुण कुलीनता की पहली पदवी है।

परकीय आशा :

☐परकीय आशा सदा निराशा।

परछिद्रान्वेषण :

☐यदि आप पर-छिद्रान्वेषी है तो समाज आपको मक्खी जैसा समझता होगा। दूसरो के दुर्गुणो को देखकर कहते फिरना, वैसा ही है जैसा गलियो का कूडा गाडियो मे भरकर ले चलना।

पर-निन्दा

☐पर-निन्दा का त्याग करो। दूसरो के दोषो की बात कहना ही निन्दा नही, बल्कि दूसरे को हीन बनाने की प्रवृत्ति भी निन्दा ही है जो आत्मघातक है।

परम-विजयी

☐जो पुरुष दुर्जेय सग्राम मे दस लाख योद्धाओ को जीतता है इसकी अपेक्षा एक वह जो अपने आपको जीतता है, यह उसकी परम-विजय है।

परमात्मा

☐न तो शास्त्र और न गुरु ही हमे परमेश्वर का दर्शन करा सकते है। मनुष्य स्वय ही मन, वचन और काया की शुद्धि से

आत्मा मे परमात्मा देखता है।

पराजित :

☐महासग्राम में विजित होकर भी जो मन पर विजय नही प्राप्त करता वह पराजित ही है।

परिग्रही :

☐कुत्ता अगर अपने पट्टे को गहना समझे तो उस जैसा मूर्ख कौन होगा ? परिग्रही अपने परिग्रह को अगर सुख का साधन मान बैठे तो उसे हम क्या समझे और क्या कहे ?

परिचय :

☐किसी को अपना परिचय देना बुरा नही है, बुरा तभी है जब वह किसी स्वार्थ या अहकार से दिया जाता है।

परिस्थितियाँ :

☐यदि परिस्थितियाँ अनुकूल न रहे तो भगवान को दोष न दो। अपना ही निरीक्षण करो। यदि जरा गहराई से सोचोगे तो तुम्हे स्वय ही अपनी कठिनाइयो के कारण ज्ञात हो जायेंगे।

परिश्रम :

☐परिश्रम हमारा देवता है।

☐परिश्रम उज्ज्वल भविष्य का पिता है।

☐अपने अमूल्य समय का एक-एक क्षण परिश्रम मे व्यतीत करना चाहिए। इसी मे आनन्द है। ऐसा करने मे कोई क्षण भी

ऐसा नही बचता जब हमे सोच या पछतावा हो ।

परिश्रमी :

☐परिश्रमी के घर के द्वार को भूख दूर से ताकती है पर भीतर नही घुस सकती ।

परीक्षा

☐आग सोने की परीक्षा करती है और प्रलोभन सच्चे मनुष्य की ।

परोपकार ·

☐"परोपकाराय सता विभूतयः ।"
सत्पुरुषो का जीवन परोपकार के लिए ही होता है ।

☐परोपकार से उत्पन्न हुआ पुण्य सैकडो यज्ञो की तुलना मे नही आ सकता ।

पलायनवाद

☐कर्म मे रहकर ही हम कर्म से महान हो सकते है । परित्याग करके या पलायन करके किसी प्रकार भी यह सम्भव नही है ।

पवित्रता के प्रतीक :

☐प्रेम, पश्चाताप व सहानुभूति ये पवित्रता के प्रतीक है ।

पशु :

☐अपनी कमजोरियो का ज्ञान होने पर मिटाने का जो प्रयत्न करता है वह मानव असाधारण, मिटाने का प्रयत्न करने पर भी

जो मिटा नहीं सकता, वह साधारण और जो अपनी कमजोरियों को जानता ही नही, वह पशु है।

☐अपनी भूल को भूल मानकर सुधारने का जो प्रयत्न करता है, वह मानव, जो कदापि भूल नही करता, वह देवता और जो भूल को भूल नही मानता, वह पशु।

पशु श्रेष्ठ है :

☐पशु खामोश रहता है और इन्सान बोलने वाला होता है। पर व्यर्थ बकवास करने वाले मनुष्य की अपेक्षा पशु श्रेष्ठ है।

पश्चाताप

☐पश्चाताप सुधार की पहली सीढी है, शान्ति, सुख और सन्तोष ही पश्चाताप का अन्तिम ध्येय है।

पहचान :

☐यदि तुम्हे अपने आप को पहचानना आया तो तुम दुनिया को पहचान सकते हो।

पाँच प्रश्न :

☐प्रातः उठकर प्रत्येक साधक अपने आप से पाँच प्रश्न करे—

मै कौन हूँ ?

कहा से आया ?

कहा जाऊंगा ?

क्या कर रहा हूँ ?

मेरे लिए क्या करने योग्य है ?

पाठशाला :

☐दु ख हमारे व्यक्तित्व को जगाता है तो सुख हमारे व्यक्तित्व को भुला देता है। ससार में दु ख ही हमारे अनुभवो की ढाल है, दु ख एक पाठशाला है जहाँ हम मानव से महामानव वनना सीखने है।

पाण्डित्य :

☐आचारहीन पाण्डित्य घुन लगी लकडी के समान अन्दर से खोखला होता है।

पान-कत्था

☐पान मे यदि कत्था न हो तो पान खाने का कोई आनन्द नही। जीवन पान के समान है तो स्त्री-पुरुप कत्थे के समान है यदि दोनो एक दूसरे के विरुद्ध रहे तो आनन्द क्या ? एक दूसरे के पूरक वने तभी जीवन का जीना सार्थक, अन्यथा नीरस जीवन व्यतीत करते रहे।

पाप :

☐जान-बूझकर किया हुआ पाप वहुत भारी होता है।

☐जिस तरह आग आग को समाप्त नही कर सकती, उसी तरह पाप, पाप का शमन नही कर सकता।

☐अपने पापो पर पर्दा डालना, अपने भविष्य पर पर्दा डालना है।

☐ जो पाप मे फस जाता है, वह मानव है, जो उस पर खेद प्रकट है, वह देवता है, जो उस पर घमण्ड करता है, वह दानव है।

☐ पाप का पारिश्रमिक दुर्गति है ।

☐ पाप को पेट मे मत रखो, उसे उगल दो। पेट मे रख लेने से जहर तो शरीर को मारता ही है। वैसे ही पेट मे रहा हुआ पाप मानव को नष्ट कर देता है।

☐ सर्प या शत्रु एक ही जन्म मे मृत्यु का कारणभूत बनता है, किन्तु पाप तो जन्म जन्मान्तर मे भी कारणभूत बनता है।

☐ जिस प्रकार सर्प के एक ही जहरीले डक से मानव की मौत हो जाती है उसी प्रकार नरक मे जाने के लिए एक ही पाप काफी है।

पाप और पुण्य :

☐ असत्य ससार का सबसे बडा पाप है और सत्य ससार का सबसे बडा पुण्य। "साच बरोबर पुण्य नही झूठ बरोबर पाप।"

☐ आत्मा का शुभ-परिणाम (भाव) पुण्य है और अशुभ-परिणाम पाप है।

पाप का भागी :

☐ "केवलाघो भवति केवलादी"

दूसरो को न देकर जो स्वय अकेला ही भोजन करता है, वह केवल पाप का ही भागी होता है।

पाप का भागीदार :

☐जब तक मेरे पास जरूरत से ज्यादा खाने की चीजे हैं और दूसरो के पास कुछ नही है, जब तक मेरे पास दो वस्त्र है और किसी आदमी के पास एक भी नही है, तब तक दुनिया मे सतत चलते हुए पाप का मैं भागीदार हूँ।

पाप का मूल

☐लोभ, द्वेष और मोह पाप के मूल है।

पाप की दुर्गन्ध :

☐पाप को दुर्गन्ध पुण्य के परिमल से अधिक तीव्रतर होती है। जितना भी प्रयत्न उसे छिपाने का करो वह प्रकट होकर ही रहेगी।

पाप के कारण

☐मनुष्य राग, द्वेष, मोह और भय के वश होकर पाप-कर्म करता है।

पाप-शुद्धि :

☐जो पहले के अर्जित पाप को बाद मे मार्जित (साफ) कर देता है, वह बादलो से मुक्त शरद्पूर्णिमा के चन्द्रमा की भांति लोक को प्रकाशित करता है।

पाप श्रमण :

☐जो श्रमण खा पीकर खूब सोता है, समय पर धर्माराधन नही

करता, वह पाप श्रमण है।

☐ जो श्रमण भिक्षा से प्राप्त सामग्री को अपने साथियों में बांटता नहीं है, तथा रसीले भोजन की प्राप्ति के लिए घर-घर भटकता है, वह पाप श्रमण है।

पापाश्रव :

☐ प्रमाद बहुलचर्या, मन की कलुषता, विषयों के प्रति लोलुपता परपरिताप (परपीडा) और परनिंदा—इन से पाप का आश्रव होता है।

पात्र

☐ सरल हृदय एवं निष्कपट साधक ही शुद्ध हो सकता है। शुद्ध मनुष्य के अन्तःकरण में धर्म ठहर सकता है। 'धम्मो सुद्धस्स चिट्ठइ'

पाप-कुपात्र :

☐ गुण योग्यपात्र मिल जाने से गुण ही रहते हैं किन्तु कुपात्र में मिल जाने से वे ही गुण दोष बन जाते हैं, जैसे मीठे जलवाली नदियाँ समुद्र में जाकर खारी बन जाती हैं।

पिशुन :

☐ जो प्रीति से शून्य है वह 'पिशुन' है।

पुण्याश्रव :

☐ जिसका राग प्रशस्त है, अन्तर में अनुकम्पा की वृत्ति है और

मन मे कलुषभाव नही हे, उस जीव को पुण्य का आश्रब होता है।

पुनर्भव

☐जैसे बीज जला डालने पर फिर वृक्ष पैदा नही होता, वैसे ही कर्म बीज को नष्ट कर देने पर पुनर्भव—जन्म और मरण रूपी फल उत्पन्न नही हो सकते।

पुरुष

☐जिसका हृदय पहले बोलता है और वाणी बाद मे वह महा-पुरुप।

जिसकी वाणी पहले बोलती है और हृदय बाद मे बोलता है, वह मध्यम पुरुष।

जिसकी केवल वाणी ही पहले और वाद मे बोलती है, वह-अधम पुरुष।

पुरुष और नारी :

☐पुरुष को शक्तिमान और नारी को सुन्दर माना गया है। यही धारणा एक रूढी बन गई है, किन्तु यदि हम इसे वास्तविकता की कसौटी पर कसे तो हम इस निष्कर्ष पर पहुँचेगे कि वास्तव मे पुरुप मुन्दर है और नारी शक्ति का आधार है।

पुरुषार्थ :

☐निकम्मे शेर से मेहनती कुत्ता ही अच्छा है।

☐मनुष्य बार-बार गिरता है, यह महत्त्व की बात नही, किन्तु गिरकर जो उठता है यही पुरुपार्थ है।

☐भाग्य को कोसने की आदत को छोड़कर पुरुपार्थ को सहला ! सफलता का यह सर्वोत्तम मार्ग है। पुरुपार्थ भाग्य को फलित ही नही करता अपितु नये भाग्य का निर्माण भी करता है। प्रतिकूल भाग्य को अनुकूल बनाने का तो इसमे अद्भुत सामर्थ्य निहित है।

☐विना कठिनाई का पुरुपार्थ सुगन्ध रहित फूल है व जलरहित बादल।

☐हम सहजता से प्राप्त वस्तुओ को पाने के आदी हो गये है। यदि हमे विना पुरुपार्थ से वस्तु नही मिलती है तो खिन्न हो जाते हैं। किन्तु यह ध्यान रखना चाहिए—सभी कार्य पुरुपार्थ से ही सिद्ध होते हैं। पुरुपार्थ से पगदण्डी भी राजमार्ग बन जाती है।

☐किया हुआ पुरुपार्थ ही भाग्य का अनुसरण करता है, परन्तु पुरुपार्थ न करने पर भाग्य किसी को कुछ नही दे सकता।

पुरुपार्थी :

☐मैं अपने जीवन पथ की बड़ी से बड़ी विघ्न-बाधाओ को परास्त कर दूंगा।

☐पुरुपार्थी परिस्थितियो का गुलाम नही बनता किन्तु परिस्थितियां ही उसकी गुलाम बनती है।

पुस्तक :

☐पुस्तके काल सागर पर सुरम्य सेतु है। वे वर्तमान को अतीत से जोडती है और भविष्य की ओर उन्मुख करती है।
पुस्तके निराशा मे आशा उत्पन्न करती है और गहन अन्धकार को आलोक मे वदल देती है

☐पुस्तको का मूल्य रत्नो से भी अधिक है, क्योकि रत्न बाहरी चमक दमक दिखाते है जबकि पुस्तके अन्तःकरण को उज्ज्वल करती है।

☐मनुष्य जाति ने जो कुछ किया सोचा और पाया है वह पुस्तको के जादू भरे पृष्ठो मे सुरक्षित हैं।

☐विचारो के युद्ध मे पुस्तके ही अस्त्र है।

☐बुद्धिमानो की रचनाये ही एकमात्र ऐसी अक्षय निधि है, जिन्हे हमारी सन्तति विनष्ट नही कर सकती।

☐आज के लिए और सदा के लिए सबसे बडा मित्र है अच्छी पुस्तके।

पूज्य :

गुणो से साधु होता है और अवगुणो से असाधु। इसलिए साधु को चाहिए कि वह अवगुणो को छोड गुणो को ग्रहण करे। आत्मा को आत्मा से जानकर जो राग और द्वेष मे सम रहता है, वह

पूज्य है।

पूज्य कौन :

☐संस्तारक, शय्या, आसन, भक्त पान, तथा अन्य अनेक वस्तुओं का लाभ होने पर भी जिसकी इच्छा अल्प होती है, जो आवश्यकता से अधिक नही लेता, जो इस प्रकार जिस किसी भी वस्तु से अपने आप को सन्तुष्ट कर लेता है, जो सन्तोषी जीवन मे रत है, वह पूज्य है।

पूर्ण शान्ति का मार्ग :

☐पूर्ण शान्ति का मुझे कोई मार्ग दिखाई नही देता, सिवाय इसके कि व्यक्ति अपने अन्तर की आवाज पर चले।

पूर्ण शुद्ध :

☐बिना काटो का गुलाब नही होता वैसे ही ससार मे विशुद्ध भलाई भी अलभ्य है जो पूर्ण शुद्ध है वही तो परमात्मा है।

पैसा :

☐जब पैसे का सवाल आता है तब सब एक मजहब के हो जाते हैं।

पौद्‌गलिक पदार्थ :

☐सुन्दर फल और मिठाइयो के आकार, रूप और रग मे तरह-तरह के मिट्टी और लकडी के खिलौने बाजार मे मिलते है पर क्या उनसे भूख मिट सकती है ? ससार के पौद्‌गलिक पदार्थों

को भी उसी तरह ही समझना चाहिए। उनसे मन की तृप्ति नही हो सकती।

पौरुष :

□वृक्षो के लगाने मे परम कुशलमति माली ने वाटिका मे कही, सहज भाव से, एक बकुल पौधा लगा दिया। कौन जानता था कि एक कोने मे पडा हुआ वही उपेक्षित वकुल का पेड अपने सुमनो की सुगन्ध से ससार को परिपूरित कर देगा। साधारण स्थिति मे जन्म लेकर भी अनेक पुरुष अपने पौरुष से ऊपर उठ जाते है और दुनियाँ को अपने आदर्श चरित्र से आलोकित कर देते हैं। क्या अनजान व्यक्ति देश का सर्वोच्च नेता नही हुआ ?

प्रकट न करो

□यदि हमने किसी के साथ भलाई की है, उपकार किया है तो उसे किसी के सामने प्रकट मत करो। क्योकि ऐसा करने से अह-भाव जागृत होता है। यह अहवृत्ति ही हमारी अच्छाईयो को नष्ट कर देगी।

प्रकाश ·

□चार कारणो से ससार प्रकाश से प्रकाशित होता है—

अरिहन्त का जन्म होने से,

अरिहन्त देव की दीक्षा के अवसर पर,

अरिहन्त देव को जब केवल ज्ञान होता है और अरिहन्त

भगवान का निर्वाण होता है तब ।

प्रकाश और विष :

☐पाप का विष भीतर होता है और ज्ञान का प्रकाश बाहर । बाहरी प्रकाश को तीव्रतम तेज करके पाप के विष को बाहर निकाल दीजिये और ज्ञान के प्रकाश को भीतर बुला लीजिये ।

प्रकाश का रहस्य :

☐वह उल्लू जिसकी आँखे केवल रात के अन्धेरे मे ही खुलती है, प्रकाश के रहस्य को कैसे जान सकता है ।

प्रकृति

☐प्रकृति को बुरा भला न कहो । उसने अपना कर्त्तव्य पूरा किया, तुम अपना करो ।

प्रगति की मूलभूत बाधायें :

☐लक्ष्यहीनता, लक्ष्य की अस्थिरता और लक्ष्य की संकीर्णता—ये तीन प्रगति की मूलभूत बाधायें है ।

प्रजातन्त्र की परिभाषा :

☐प्रजातन्त्र की सर्वोच्च परिभाषा यही है कि—जनता पर, जनता के लिए, जनता का राज्य ।

प्रतिकार

☐दलित-घृणित, पतित पंक भी पैरो मे रोदने पर विरोध करते है तो वाग्वनी स्वाभिमानी मानव अनुचित दवाव पर क्यों नही

विरोध करेंगे ?

प्रतिक्रमण

☐प्रतिक्रमण सयम के छिद्रो को बन्द करनेके लिए है। प्रतिक्रमण से आश्रव रुकता है, सयम मे सावधानी होती है, फलत चारित्र शुद्ध होता है।

प्रतिक्रिया :

☐सचमुच आखे खोलकर देखोगे तो समस्त छवियो मे तुम्हे अपनी छवि दिखाई देगी और यदि कान खोलकर सुनोगे तो समस्त ध्वनियो मे तुम्हे अपनी ध्वनि सुनाई देगी।

प्रतिपक्षी बनो

☐यदि तुम्हे विजेता बनना है तो प्रेम को वल से, क्रोध को क्षमा से, अहकार को विनय से, अमगल को मगल से, स्वार्थ को निस्वार्थ से, मिथ्या को सत्य से जीतना चाहिए।

प्रतिशोध

☐पर्वतो मे पानी नही रहता, महापुरुषो के मन मे प्रतिशोध की भावना नही रहती।

प्रतिष्ठा :

☐यदि आप स्वय प्रतिष्ठावान न होकर केवल पूर्वजो की प्रतिष्ठा के वल पर अपने को प्रतिष्ठित बनवाना चाहते हो तो यह आप का भ्रम है। अपने सेवा आदि गुणो से ही मानव प्रतिष्ठा

प्राप्त कर सकता है, जन्म, जाति व कुल से नही।

□महान व्यक्तियो ने जो प्रतिष्ठा प्राप्त की है वह उन्हें सहसा एक ही प्रयास मे नही मिल गई है। जब उनके अन्य साथी लोग सोये पडे थे तो वे चुपचाप आत्मोत्थान के लिए प्रयत्नशील थे। इस प्रकार वे उच्चता के शिखर पर पहुँचकर उच्च बन सके।

प्रति-संहृत

□जहा कही भी मन, वचन, और काया को दुष्प्रवृत्त होता हुआ देखे तो धीर साधक वही उनको प्रति-सहृत करे—फिर सत्प्रवृत्ति मे लगाये, जैसे जातिवान अश्व ढीली होती हुई लगाम को प्रति सहृत करता है—फिर ऊपर उठा लेता है।

प्रतिस्रोतगामी बन .

□अधिकाश लोग अनुस्रोत मे प्रस्थान कर रहे है—भोगमार्ग की ओर जा रहे हैं किन्तु जो मुक्त होना चाहता है, जिसे प्रतिस्रोत मे गति करने का लक्ष्य प्राप्त है, उसे अपनी आत्मा को प्रतिस्रोत मे ही ले जाना चाहिए।

प्रतिहिंसा

□प्रतिहिंसा की प्रेरणा के मूल मे क्रोध है। वह पतन का मार्ग है। जो तुम्हे ऊँचा और महान बनाती है, वह है उपेक्षा।

प्रतीक्षा

□जो एकदम सब कुछ कर डालने की प्रतीक्षा मे है, वह कभी

कुछ नही कर पायेगा।

प्रथम सुख, पश्चात दु ख

☐दाद के खुजलाने मे पहले जितना सुख होता है उतना ही खुजलाने के वाद असह्य दु:ख होता है, उसीप्रकार ससार के सुख पहले वडे सुखदायक प्रतीत होते है लेकिन पीछे से उनसे असह्य और अकथनीय दु ख मिलता है।

प्रदर्शन .

☐जलशून्य मेघ अधिक प्रदर्शन करते है। हृदयशून्य व्यक्ति को प्रदर्शन का मूल्य अधिक रहता हे। ऊनी और सूती वस्त्र अविरल मेघधारा मे भी पानी का प्रदर्शन अधिक नही करते है जवकि प्लास्टिक वस्त्र ओवरकोट किञ्चित् पानी का भी प्रदर्शन करते है।

प्रभाव

☐यदि आप अपना प्रभाव वनाये रखना चाहते है तो दो वाते याद रखिये—कभी किसी से झूठा वायदा मत कीजिये और कभी किसी को गलत सलाह मत दीजिये।

प्रभुता .

☐अपनी प्रभुता के लिए चाहे जितने उपाय किये जाये परन्तु शील के विना ससार मे सव फीका है।

प्रभु प्राप्ति के मार्ग .

☐शुद्धमन, प्रेममय व्यवहार, निष्काम भक्ति व निष्काम सेवा प्रभु प्राप्ति के मार्ग है ।

प्रभु भक्ति :

☐यौवनावस्था मे मौज करना व बुढ़ापे मे माला लेकर भगवान को भजना, आम खाकर गुठली का दान करना जैसा है, अतः युवावस्था मे ही प्रभु भक्ति करनी चाहिए ।

प्रभु सेवा

☐जन सेवा ही सच्ची प्रभु सेवा है ।

प्रमाद :

☐यदि ससार मे प्रमादरूपी राक्षस न होता तो कौन धनी और विद्वान न होता । आलस्य के कारण ही यह समुद्र पर्यन्त पृथ्वी निर्धन और मूर्ख लोगो से भरी हुई है ।

प्रयत्न :

☐बुद्धि का विकास प्रयत्न से होता है । यहा तक की मानव सत्प्रयत्न से परमेश्वर को भी प्राप्त कर लेता है । यदि मानव प्रयत्न नही करता तो यह बुद्धि असहाय बन जाती और वैभव स्वप्न ।

प्रवृत्ति के बाद निवृत्ति :

☐मनुष्य को केवल सांसारिक प्रवृत्ति मे ही लगा नही रहना

चाहिए। प्रवृत्ति के बाद निवृत्ति आत्मकल्याण के लिए आवश्यक है।

प्रशंसा .

☐साधारण व्यक्तियो की प्रशसा प्राय झूठी होती है और ऐसी प्रशसा सज्जनो की अपेक्षा धूर्तों की ही अधिक की जाती हे।

☐दूरी ही प्रशसा की गहराई का मूल कारण है।

☐साधक, न अपनी प्रशसा करे, न दूसरो की निन्दा करे।

☐आत्मप्रशसक हीनकोटि का व्यक्ति होता है। मध्यमकोटि के मनुष्य की प्रशसा उसके मित्रगण भी करते है। उत्तम पुरुष की उसके शत्रु भी करते हैं।

प्रशसा कुवारी क्यो ?

☐विचारी प्रशसा-स्तुति हजारो वर्ष से अब तक कुवारी है। वह सज्जनो एव महापुरुषो से प्रार्थना करती है "मेरा वरण करो' लेकिन उसकी प्रार्थना ठुकराई जाती है। उसे वे स्वीकार नही करते। दूसरी ओर जो लोग उसको प्राप्त करने के लिए कोशिश करते है परन्तु वह उनसे दूर भागती जाती है, इसलिए प्रशसा बेचारी कुवारी है। दुर्जन को वह चाहती नही और सज्जनो को यह प्रिय नही लगती।

प्रश्न :

☐धन पाकर किसे अभिमान न हुआ ? कौन विषयी पुरुष सकट

से दूर रहा ? इस ससार मे स्त्रियो ने किसका मन खण्डित नही किया ? राजा का प्यारा कौन हुआ ? किस मांगने वाले ने इज्जत पाई ? दुर्जन ने हाथ पकडकर किसने ससार का मार्ग सुख से पार किया ?

प्रसन्न रहो :

☐हमारी गुप्त बात प्रकट हो जाने पर दुःखी मत बनो। किन्तु फूल की तरह सदा प्रसन्न रहो। क्योकि इस ससार मे पद और प्रतिष्ठा, मान और मर्यादा सभी कुछ नाश होने वाले है।

प्रसन्नता :

☐दूसरो की सफलता और अपनी हार दोनो पर प्रसन्न रहना सीखो।

☐सम्पन्नता और प्रसन्नता एक ही वस्तुयें नही है, अपितु दो विभिन्न वस्तुयें है। प्रसन्नता एक मन की अवस्था है, मूड है जो बाहरी दशा पर निर्भर है।

☐अपने पर सबका अधिकार है किन्तु अपना अधिकार ईश्वर के सिवाय किसी पर नही है।" यह विचार यदि मन मे स्थिर कर लिया जाये तो बस जीवन मे सदा ही बहार रहेगी मन सदा प्रसन्न रहेगा।

☐बीते हुए का शोक नही करते, आने वाले भविष्य के मनसूबे नही बांधते, जो मौजूद है उसी मे सतुष्ट रहते है, उन्ही साधको का

मुख प्रसन्न रहता है।

प्राण :

□समस्त ससार के अन्धकार मे इतनी शक्ति नही है कि वह एक मोमबत्ती के प्रकाश को भी बुझा सके। जागे हुए प्राण को कोई शक्ति परास्त नही कर सकती।

प्रायश्चित्त

□पुन. अपराध नही करना ही अपराध का सच्चा प्रायश्चित्त है।

□प्रायश्चित के तीन प्रकार हैं—आत्मग्लानि पुन: पाप ने करने का दृढ निश्चय और आत्म शुद्धि।

प्रार्थना

□स्वच्छ हृदय एव पवित्रता से रहित की जाने वाली प्रार्थना विना गुदे के छिलके के समान निरर्थक है।

□प्रतिदिन सच्चे दिल से की गई प्रार्थना कभी निष्फल नही होती।

प्रिय-अप्रिय :

□चाह के होने से ही प्रिय-अप्रिय होते है। चाह के न होने से प्रिय-अप्रिय नही होते

प्रेम

□सर्वोच्च प्रेम तकल्लुफ नही सहता।

□प्रेम क्या है? खारा पानी, क्योकि उसका आदि मध्य और अन्त

आँसुओ से परिपूर्ण है ।

□वह पत्थर है मनुष्य नही, जो प्रेम नही करता । वह कीचड की तरह गधा है जो प्रेम को अपवित्र करता है । प्रेम शरीर से प्रारम्भ नही होता वह हृदय से प्रारम्भ होता है । जिसके हृदय मे प्रेम है वह किसी से नही डरता ।

□प्रेम से ही सृष्टि का जन्म होता है, प्रेम से ही उसकी व्यवस्था होती है और अन्त मे प्रेम मे ही वह विलीन हो जाती है ।

□अपने प्रेम की परिधि हमे इतनी बढानी चाहिए कि उसमे गाव आ जायें, गाव से नगर, नगर से प्रान्त यो हमारे प्रेम का विस्तार सम्पूर्ण संसार तक होना चाहिए ।

□प्रेम देना जानता है लेना नही । प्रेम मे अगर दौलत मिलती है पर प्रेमी लेना नही चाहता । वह तो निरन्तर देता ही रहता है ।

□सनलाइट साबुन से कपडे उज्ज्वल एव साफ सुथरे हो जाते हैं तो प्रेम से अन्तर विरोध की धधकती ज्वाला शान्त होकर हृदय मे सरलता देवी का प्रवेश हो जाता है । तलवार की धार एक के दो करती है, किन्तु प्रेम की धार दो को एक करती है । प्रेम से मानव सरल एव उज्ज्वल बनता है ।

□तिरस्कार या निन्दा से कोई व्यक्ति सन्मार्ग पर नही आ सकता । सत्कार या प्रेम से ही व्यक्ति को सन्मार्ग पर लाया जा

सकता है।

□प्रेम हमे जोडना सिखाता हे तोडना नही।

□मयूर की शोभा पखो से व पखो की शोभा मयूर से है, उसी प्रकार समाज की शोभा परस्पर प्रेम सम्बन्ध से है। प्रेमहीन मानव निर्जीव है।

□ प्रेम निखरता है नम्रता मे,
प्रेम पनपता हे समता भाव मे,
यो तो सब ही प्रेम के दाता है,
प्रेम महकता है ममता मे।

□मैंने दिल के दरवाजे पर लिखा 'अन्दर आना मना है'—हसता हुआ प्रेम आया और बोला—'मै हर जगह प्रवेश कर सकता हू।'

□अपमान से टूटे प्रेम को कौन जोड सकता है ? टूटा हुआ मोती लाख के लेप से फिर नही जोडा जा सकता।

प्रेम के दो मार्ग।

□प्रेम से काम, काम से वासना और वासना से मानव पतन की ओर जाता है।

प्रेम से मैत्रीभाव, मैत्रीभाव से करुणा, करुणा से प्रमोद और प्रमोद से आत्मा विकास की ओर बढता है।

प्रेरणा :

□दूसरो की बढती को देखकर जो उदास होता है वह मूर्ख है।

बुद्धिमान तो वही है जो दूसरों की वृद्धि को देख उनसे प्रेरणा ग्रहण करता है और अपना विकास करता है।

फकीर :

☐अलमस्त एवं सच्चे फकीर का आदर्श वाक्य है—अपने को ईश्वराधीन बना देना, सही अर्थों मे खुदा का बन्दा हो जाना। वह खुदा के अलावा न किसी को जानता है और न जानने की कोशिश ही करता है। खुदा से नाता रखनेवाले को दुनियाँ की भलाई बुराई मे क्या मतलब ?

फूट :

☐उस जाति की स्थिति कितनी दयनीय है, जो परस्पर वैमनस्य के कारण कई सम्प्रदायो मे बँट चुकी है और हर सम्प्रदाय स्वय को एक जाति मानने लगा है।

फूल और काँटा :

☐फूल के साथ काँटे की भी आवश्यकता है। क्योंकि फूल खिलने और महकने के लिए है तो काँटे फूल के सरक्षण के लिए हैं।

बड़प्पन :

☐जो मानव अपने को छोटा समझता है दुनियां की नजरों मे वह महान है। अपने को तुच्छ मानने मे उसकी सफलता उसके चरण चूमती है।

बड़ा व्यक्ति :

☐वहुत-सी और वडी-वडी गलतिया किये बिना कोई व्यक्ति बडा और महान नही बना ।

वदनामी

☐एक बार की वदनामी पचास बार की नेकनामी भी समाप्त कर देती है । दूध मे एक बार खराबी आने पर वह क्या पुन: पीने योग्य हो सकता है ?

बन्द रखो ?

☐स्वर्ण और सिह दोनो को बन्द रखना चाहिए । क्योकि एक मूल्यवान है तो दूसरा ताकतवर । एक का अपहरण होने का भय है तो दूसरे का हमलावर ।

बन्ध और मोक्ष :

☐परिणाम से ही वन्धन और परिणाम से ही मोक्ष होता है ।
"मनएव मनुष्याणा कारण वन्व-मोक्षयो ।"

बन्धन :

☐बन्धन तो कई तरह के होते है, मिन्तु प्रेम का वन्धन कुछ और ही होता है । भौरा लकडी को भी सासानी से काट सकता है, परन्तु वह कमल के कोश मे पडा हुआ शक्ति होने पर भी कुछ नही करता ।

☐वन्धन चाहे सोने का हो या लोहे का, वन्धन तो आखिर दुःख

कारक ही है। बहुत मूल्यवान डण्डे का प्रहार होने पर भी दर्द तो होता ही है।

बन्धन और मुक्ति :

☐किसी भी पदार्थ के प्रति ममत्व भाव लाना ही बन्धन है और उसके ऊपर से ममत्व हटाना ही मुक्ति है।

बनो .

☐सत्यप्रिय बनो और धीरज से काम करो।

बर्बादी के कारण :

☐अतिनिद्रा, परस्त्रीगमन, कलह, अनर्थ करना, बुरे लोगों की मित्रता, कृपणता ये छह दोष मनुष्य को बर्बाद करने वाले हैं।

बलवान :

☐प्रलोभनों के बीच जो अनासक्त और दृढ़ रह सकता है वही बलवान है।

बस की बात .

☐जन्म और मरण इन दोनों पर भी हमारा कोई वश नहीं है, हां हम उनके अन्तराल का आनन्द अवश्य उठा सकते हैं।

बहुरूपिया :

☐हमारी यह जिन्दगी न जाने क्या-क्या खेल खेलती है, यह तो बहुरूपिया है। दूसरी दुनियां बनाते हमें समय नहीं लगता। यह जीवन तो पृथ्वी के गर्भ में छिपे हुए पदार्थ की तरह है जिसमें

आप चाहे तो स्वर्ण भी निकाल सकते हो और कोयला भी।

बांटकर खाओ :

☐जो मनुष्य अपनी रोटी दूसरो के साथ बाटकर खाता है उसको भूख की भयानक बीमारी कभी स्पर्श नही करती।

बाटो :

☐भग जिस तरह ज्यादा के ज्यादा पीसने से ज्यादा नशीली हो जाती है वैसे ही आनन्द जितने ज्यादा आदमियो मे बाटोगे, बढता ही जायगा।

बालक

☐बालक देश के दर्पण प्रकृति के अनमोल रत्न, सबसे निर्दोष वस्तु, मनोविज्ञान का मूल और शिक्षक की प्रयोगशाला है।

☐बालक राष्ट्र की आत्मा है, क्योकि यही वह बेल है जिसको लेकर राष्ट्र पल्लवित हो सकता है, यही वह भूमि है जिसमे अतीत सोया हुआ है, वर्तमान करवटे ले रहा है और भविष्य के अदृश्य बीज बोये जा रहे है।

☐बालक चमकते हुए तारे हैं जो ईश्वर के हाथ से छूटकर धरती पर गिर पडे है।

☐हर बालक इस सन्देश को लेकर आता है कि ईश्वर अभी मनुष्य से निराश नही हुआ है।

बाहरी चमक :

□हमें बाहरी चमक दमक से किसी वस्तु को अच्छी नही मान लेनी चाहिए किन्तु वस्तु की विशुद्धता को देख कर ही उसे ग्रहण करना चाहिए क्योंकि जो चमकता है वह सभी सोना नही होता।

बिना बुलाये जाओ :

□किसी के दुःख, बीमारी, आपत्ति मे या मृत्यु के समय बिना बुलाये ही चले जाओ। बुलाने की राह मत देखो। शत्रुता भूल कर भी आपत्ति के समय शत्रु की मदद करो।

बुद्धि :

□अमूल्य साधन बहुमूल्य समय और कीमती जीवन यह सब किसके लिए? कब तक? ऐसा विचार मोह के आवरण वाली बुद्धि करने ही नही देती।

□"विनाश काले विपरीत बुद्धि"।

विनाश के समय बुद्धि उलटी ही चलती है।

□बुद्धि से विचार कर किये हुए कर्म ही श्रेष्ठ होते है।

□बुद्धि से काम लेने वाला व्यक्ति आपत्तियो मे पार हो जाता है; और मूर्खता से काम करने वाला संकट मे फँस जाता है।

बुद्धि का उपयोग :

□मानव ने अपनी बुद्धि तो बहुत घुमाई किन्तु, घुमाते-घुमाते वह

ईतना घूम गया कि उसे अपने आपका भान भी नही रहा ।

बुद्धि का फल

☐कदाग्रह न होना यही बुद्धि का फल है ।

बुद्धिमान

☐यौवन और सौन्दर्य मे बुद्धिमत्ता अत्यन्त विरल होती है ।

☐एक मूर्ख भी एक मिनिट मे उतने प्रश्न कर सकता है जिनका उत्तर एक दर्जन बुद्धिमान एक घण्टे मे भी नही दे सकते ।

☐बुद्धिमान आदमी वोलते कम और काम अधिक करते है ।

☐जो अपनी आय से व्यय वहुत कम करता है, बुद्धिमान है ।

☐अपने प्रति बुद्धिमान बनने की अपेक्षा दूसरो के प्रति बुद्धिमान बनना सरल है ।

☐बुद्धिमान पुरुप गिरते हुए भी गेद के गिरने के समान एक वार गिरता है तो तत्काल पुनः उठ जाता है । मूर्ख तो मिट्टी के ढेले के समान गिरता है और चकनाचूर हो जाता है । फिर नही उठता ।

बुद्धिमान बनने का उपाय

☐जहाँ भी किसी मे विशिष्ट गुण को देखो, उसे ग्रहण करने की चेष्टा करो, और अपने मे दुर्गुण को देखो तो तुरत उसे छोड दो । गुण सग्रही मनुष्य श्रेष्ठ होता है ।

☐थोडा पढना, ज्यादा मोचना, कम बोलना, ज्यादा सुनना यही

बुद्धिमान बनने के उपाय है ।

बुद्धिमान् और बुद्धिहीन :

☐बोलने के पहले जो सौ बार सोचता है वह बुद्धिमान् । बोलने के बाद जो सौ बार सोचता है वह बुद्धिहीन ।

बुद्धि वृद्धि के उपाय :-

☐जो सदा पूछता, सुनता, रात-दिन धारण करता है, उसकी बुद्धि सूर्य की किरणो से कमलिनी के समान बढती है ।

बुराई .

☐बुराई का सम्पर्क हमारी अच्छी आदतो को भी दूषित कर देता है ।

बेकार :

☐यदि हम बेकार है, किसी कार्य को नही करते है तो हमे अपना समय प्रभु स्मरण मे व्यतीत करना चाहिए ।

ब्रह्मचर्य :

☐ब्रह्मचर्य का अर्थ है मन, वचन और काया से समस्त इन्द्रियो का सयम । जब तक पूर्ण इन्द्रिय सयम नही होगा तब तक वह सच्चा ब्रह्मचारी नही बन सकता । इच्छा का निरोध ही ब्रह्मचर्य है ।

☐ब्रह्मचर्य केवल कृत्रिम सयम नही है । बल्कि हृदय के भीतर से जागृत होने वाला आत्मनियत्रण है ।

☐केवल जननेन्द्रिय पर निग्रह रखना ही ब्रह्मचर्य का अर्थ नही है, किन्तु सम्पूर्ण इन्द्रियो और विषयो पर निग्रह करना ब्रह्मचर्य का परिपूर्ण अर्थ है ।

☐ब्रह्मचर्यहीन जीवन विना लगर का जहाज हैं, जीवन सागर मे बहते रहने की योग्यता उसमे नही होती, किन्तु किसी किनारे पर रद्दी के साथ पडा रहना ही उसके भाग्य मे लिखा होता है।

☐ब्रह्मचर्य जीवन का अग्नि तत्व है, तेजस् एव ओजस् है। उसका प्रकाश जीवन को ही नही, बल्कि सारे लोक को प्रकाश-मान वना देता है ।

☐ब्रह्मचर्य केवल कृत्रिम सयम नही, बल्कि हृदय के भीतर से जागृत होने वाला आत्मनियन्त्रण हैं ।

ब्रह्मचर्य धर्म

☐यह ब्रह्मचर्य धर्म, ध्रुव, नित्य, शाश्वत और अर्हत् के द्वारा उपदिष्ट है । इसका पालन कर अनेकजीव सिद्ध हुए है, हो रहे हैं और भविष्य मे भी होगे।

ब्रह्मचारी .

☐मनोज्ञ, राग उत्पन्न करने वाले शब्द, रूप, गन्ध, और स्पर्श का ब्रह्मचारी त्याग करे ।

☐आत्मगवेषी पुरुष के लिए विभूषा, स्त्री का ससर्ग और प्रणीत-रस का भोजन तालपुट विष के समान है ।

ब्राह्मण :

☐ जो मन, वचन, काया से दुष्कर्म नही करता वही सच्चा ब्राह्मण है।

☐ सिर मुडा लेने से, या गले मे रुद्राक्ष की माला धारण करने से, यज्ञोपवीत पहनने से, या ओंकार के जप से कोई व्यक्ति ब्राह्मण नही हो सकता, किन्तु सत्य, शील, तप व धर्माचरण से ही व्यक्ति ब्राह्मण बनता है।

☐ जिसकी मेधाशक्ति अपूर्व है, जो अपने हित अहित के मार्ग को पहचानता है। जो समस्त प्राणियो का हित चाहता है। वही सच्चा ब्राह्मण है।

भगवान का मन्दिर :

☐ भगवान के पास जाने के लिए दूर जाने की आवश्यकता नहीं अपने हृदय के भीतर ही टटोलो। इस हृदय को मलिन मत करो। यह भगवान का मन्दिर है।

भगवान की खोज :

☐ भगवान के आवास नदी, पर्वत या मन्दिर नहीं हो सकते क्योंकि इनमे पवित्रता कहा ? भगवान का निवास है ज्योतिर्मय चैतन्य-मन्दिर मे। जिस मन मे श्रद्धा की ज्योति प्रज्वलित है, उस प्रकाश मे ही भगवान रहते है।

भक्त :

☐भक्त के हृदय मे प्रभु प्रेम की ज्वाला इतनी सतेज होती है कि उसमे काम वासना जैसी चीजे जलकर भस्म हो जाती है और आत्मा उज्ज्वल हो उठती है ।

भक्ति :

☐भक्ति और सत्सग पापो के नाश और जीवन मे मिलने वाली शान्ति इन दोनो मे सहायक है ।

☐भक्ति का अर्थ, दासता या गुलामी नही है। भक्ति का अर्थ है, अपने आराध्य के साथ एकता और अभेदता की अनुभूति । जब यह अनुभूति जगती है, तभी सच्ची भक्ति प्रकट होती है ।

☐महापुरुपो की सच्ची भक्ति उनके उपदेश सुनकर उसका आचरण करने मे है ।

भक्ति-पानी :

☐साबुन, अरीठा व पानी इन तीनो से वस्त्र स्वच्छ हो जाता है उसी प्रकार ज्ञान, ध्यान और कर्मयोग रूप साबुन से तथा भक्ति योग रूप जल से आत्मा स्वच्छ हो जाता है ।

भक्तियोग :

☐भक्तियोग, ज्ञानयोग और कर्मयोग मे भक्तियोग सरल है। ज्ञान योग और कर्मयोग कठिन । ज्ञानयोग व कर्मयोग मे अहकार बढ़ने की सभावना रहती है। अत भक्तियोग इन दोनो की अपेक्षा

श्रेष्ठ है। क्योंकि भक्तियोग मे आसक्ति व अहकार नष्ट हो जाते हैं। ज्ञानयोग, कर्मयोग असिधारा पथ है तो भक्तियोग राजमार्ग।

भय :

☐ इगलेण्ड की एक प्राचीन लोक-कथा है—एक यात्री को मार्ग मे प्लेग मिला। उसने पूछा—"प्लेग किधर जाते हो ?"

प्लेग— पाच हजार मनुष्यो को खाने के लिए जा रहा हू।'

थोडे दिनो के बाद उसी यात्री को प्लेग वापस आता हुआ मिला।

यात्री ने कहा—"तुमने कहा था कि मै पाच हजार को खाने जा रहा हू, किन्तु पचास हजार को कैसे खत्म किया ?"

प्लेग—'मैंने पाच हजार ही मारे हैं दूसरे सभी भयभीत होकर अपने आप मरे हैं।"

☐ जब तक भय नही आता तब तक उससे डरना चाहिए, किन्तु आने के बाद उसका साहस पूर्वक सामना करना चाहिए।

☐ भय मनुष्य को खतरे से दूर रख सकता है परन्तु खतरे में केवल साहस ही उसकी सहायता करता है।

☐ भय सदा अज्ञानता से उत्पन्न होता है।

☐ जहाँ जड़ पदार्थों के प्रति आसक्ति और मोह है वहाँ भय-निश्चित है। इस भय से मुक्त होने का एकमात्र रास्ता विरक्ति है।

भय और अभय :

☐शस्त्र की सफलता भय मे है और शास्त्र की सफलता अभय मे है ।

भयकर झूठ :

☐भयकरतम झूठ वह नही, जिसे बोला जाता है बल्कि वह है जिस पर जिया जाता है ।

भलाई ·

☐भलाई करने से ही मनुष्य को निश्चितरूप से आनन्द मिलता है ।

☐यदि तुम तन से या धन से किसी का भला नही कर सकते हो तो मत करो, किन्तु मन से भला करना मत भूलो ।

भलाई और बुराई

☐भलाई अमरता की ओर जाती है, बुराई विनाश की ओर ।

भाग्य :

☐पुरुष के भाग्य को भगवान भी नही जान सकते तो मनुष्य की तो बात ही क्या है ?

☐हमे सन्तोष और आत्मतृप्ति तभी हो सकती है जबकि हम अपने भाग्य का निपटारा स्वय अपने तरीके से करे ।

भाव बढाना

☐आजकल के लोग दुनिया पर अपनी छाप बिठाना चाहते है

किन्तु प्रभाव बढे ऐसे कार्य करने को उद्यत नहीं होते। प्रभाव भाव के बढने से बढता है, प्रभाव भाव का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है।

भावना :

☐नाचकर, गाकर, कीर्तन मे रग लाया जा सकता है, पर ईश्वर प्रेम नही लाया जा सकता। वह तो अन्तर की भावना मे ही आ सकता है।

☐यदि हमारी भावना सही नही है तो हमारे निर्णय भी अवश्य गलत होंगे।

☐आत्मबोध और जगद्बोध के बीच ज्ञानियों ने गहरी खाई खोदी, पर हृदय ने कभी उसकी परवाह नहीं की। भावना दोनो को एक ही मानकर चलती है।

भिखारी :

☐भिखारी को सारी दुनिया भी दे दी जाय फिर भी वह भिखारी ही रहेगा।

भीख :

☐भीख मांगना पुरुषार्थ का सबसे बडा लाछन है।

भीरु :

☐दोषी आदमी सदा भयभीत रहता है।

भूल :

☐जो कोशिश करता है उससे भूले भी होती है।

☐अपनी भूल को नही समझना अज्ञान है।

भूल को स्वीकार नही करना दुराग्रह है।

भूल की पुनरावृत्ति करना मूर्खता है और भूल को सुधारने का प्रयत्न करना प्रगति है।

भूल जाना

☐मनुष्य को देकर भूल जाना चाहिए लेकिन लेकर नही।

भोग :

☐भोगो के चिन्तन से ही मनुष्य भोगो का गुलाम वन जाता है तो भोगो का प्रत्यक्ष सेवन करने वाले की क्या दशा होगी ?

भोगी-अभोगी

☐भोगी मे कर्मों का लेप होता है। अभोगी लिप्त नही होता। भोगी ससार मे भ्रमण करता है। अभोगी उससे मुक्त हो जाता है।

भोग-विरति

☐समदृष्टि पूर्वक विचरते हुए भी यदि कदाचित् यह मन सयम से वाहर निकल जाय तो यह विचार कर "कि वह मेरी नही है और न मैं ही उसका हूँ।" मुमुक्षु विपय राग को दूर करे।

भोजन :

☐जिस प्रकार दीपक अधकार की कालिमा का भक्षण करके

कज्जल रूप कालिमा ही पैदा करता है, उसी प्रकार मनुष्य भी जैसा खाता है वैसे ही अपने ज्ञान को प्रकट करता है।

□शरीर का भोजन अन्न है और जीवन का भोज शास्त्रश्रवण। अन्न से शरीर पुष्ट होता है और शास्त्र श्रवण से जीवन।

□सत्कार पूर्वक प्राप्त अन्न सदा वल प्रदान करता है। तिरस्कार की भावना से खाया हुआ अन्न मानव को निर्वल और रोगी बनाता है।

मत और बच्चा .

□हर व्यक्ति अपने मत और बच्चों को अच्छा समझता है। लेकिन दूसरो का मत और बच्चा ठीक नही है यह मानना अनुचित है।

मत करो :

□जिस काम को तुम स्वय नही चाहते, वह काम दूसरो के लिए मत करो।

मत झुको :

□अपने प्राणो से भी हाथ धोना पडे तो भी बुराई के आगे मत झुको।

मतभेद ·

□माता पिता के साथ मत-भेद हो सकता है किन्तु मन-भेद नही होना चाहिए।

शुकदेव व व्यास पिता पुत्र थे। इनमे मत-भेद था, मन-भेद नही।

मद :

☐ससार मे तीन मद है—विद्या का मद, धन का मद और कुल का मद। विद्यावान, कुलवान और धनवान बनने पर भी उत्तम पुरुष नम्र ही रहते हैं।

मदान्धता .

☐मदान्ध व्यक्ति उन्मत्त हाथी की भाँति क्या-क्या अनर्थ नही कर डालता।

मद्यपान :

☐मद्यपान से धन की हानि होती है, कलह बढता है, अपयश मिलता है। लज्जा का नाश होता है। और बुद्धि नष्ट हो जाती है।

मन .

☐मन नरक को स्वर्ग बना सकता है, स्वर्ग को नरक।

☐यदि तुमने दुर्जय मन को जीत लिया तो तुम दुनिया को सहज मे जीत सकते हो।

☐मन को शुद्ध करने के लिए सदा पवित्र मन्त्र का जप करना चाहिए। और मन को स्थिर करने के लिए निर्विकल्प ध्यान करना चाहिए।

☐ जैसे परिश्रम से शरीर बलवान होता है वैसे ही कठिनाइयों से मन।

☐ यदि तुम कर्मों को नष्ट करना चाहते हो तो अपने मन को शुद्ध बनाओ। शुद्ध मन में ही प्रकाश उत्पन्न होता है।

☐ कायरों का मन मुर्दार, पापियों का मन रोगी, पेट भरों का मन जड, और सज्जनों का मन पवित्र होता है।

☐ जिसने अपने मन को वश में कर लिया उसने संसार भर को वश में कर लिया, किन्तु जो मनुष्य मन को न जीत कर स्वयं उसके वश में हो जाता है उसने सारे संसार की अधीनता स्वीकार कर ली।

☐ कण्ठ छेदने वाला शत्रु वैसा अनर्थ नहीं करता, जैसा बिगड़ा हुआ मन करता है।

☐ जिस प्रकार बिना छप्पर वाले घर में वर्षा का पानी सतत गिरता रहता है अवरुद्ध नहीं होता। उसी प्रकार अनावृत मन में काम, क्रोध, तृष्णा रूपी शत्रु प्रवेश कर जाते हैं।

मन और पैराशूट :

☐ मानवमस्तिष्क ठीक एक पैराशूट की तरह है—जब तक खुला रहता है तभी तक कार्यशील रहता है।

मन का दारिद्र्य :

☐ वस्तु की दरिद्रता दूर हो सकती है, किन्तु मन की दरिद्रता

को दूर करने में स्वयं कुवेर भी समर्थ नही है ।

मनन

☐आत्मा का अपने साथ बातचीत करना ही मनन है ।

मन-मनोवेग

☐मन के मनोवेग मे बुराई के कंकड मत भरो ।

मनमोती

☐दूध फटने से घी चला जाता है । मन फटने पर स्नेहरूपी मोती समाप्त हो जाता है । मोती के टूटने पर क्या उसकी कीमत तद्वत रह सकती है ?

मनः शुद्धि के उपाय :

☐मनः शुद्धि के तीन उपाय है—श्रम के प्रति प्रीति, सत्संग और भगवत् नाम स्मरण ।

मनुष्य :

☐ईश्वर ने मनुष्य को नही बनाया किन्तु मनुष्य ने ईश्वर को बनाया ।

☐ससार मे हर चीज आश्चर्य जनक है, किन्तु मनुष्य ससार का सबसे बडा आश्चर्य है ।

☐मनुष्य तो दुर्बलताओ की प्रतिमा है जिसमे देवत्व और दानवत्व दोनो का ही समावेश है ।

☐मनुष्य इस ससार मे आत्मा, विवेक और बुद्धि लेकर

आया है।

मनुष्य और घड़ी :

□मनुष्य की दशा उस घड़ी के समान है जो ठीक तरह से रखी जाय तो सौ-वर्ष तक काम दे सकती है और लापरवाही से बरती जाय तो जल्दी बिगड़ती है।

मनुष्य और पशु :

□प्रेम मनुष्य के भीतर एक शरीफ भावना का नाम है, जिसे निकाल दिया जाए तो मनुष्य और पशु में अन्तर नहीं रहता।

मनुष्य का ध्येय :

□मानव के जीवन का लक्ष्य भोग नहीं, किन्तु त्याग है।

मनुष्य के सामने प्रश्न

□मनुष्य के सामने एक ही प्रश्न है अपने जीवन को "सत्य शिव सुन्दरम्" कैसे बनाया जाय। उस समस्या का एक मात्र हल है मानव मानवता को पहचाने। जिस दिन वह पहचान जायगा उसके जीवन का वह प्रथम मंगल प्रभात होगा।

मनुष्य-जन्म :

□मनुष्य का जन्म दुर्लभ है, उसका एक क्षण भी अमूल्य है। तो भी बड़ा आश्चर्य है कि मनुष्य कौड़ियों के समान उसका व्यय करते हैं।

मनुष्य जीवन :

☐जिस प्रकार मजबूत खम्भेवाला मकान भी पुराना होने पर गिर जाता है, उसी प्रकार मनुष्य जरा और मृत्यु के वश मे पड कर नष्ट हो जाते है ।

मनुष्य-जीवन का सार :

☐ज्ञान और चारित्र मनुष्य जीवन का सार है ।

मनुष्य भी पशु है

☐जिस मनुष्य मे विद्या, तप, दान, शील, गुण, धर्म नही है वह ससार मे मनुष्य होकर भी पशु है ।

मनुष्यता से खाली :

☐आप दोनो समय भरपेट खाते है और आपका पडौसी भूखा है तो आप धर्म और मनुष्यता से खाली है ।

मनुष्यत्व :

☐सेवा और भक्ति से मनुष्यत्व की दिव्य ज्योति प्रकट होती है ।

☐व्यापक प्रेम भाव यह मनुष्यत्व का सर्वांग सुन्दर फल है ।

मनुष्य महान है

☐मनुष्य तुच्छ जीव नही है, उसके भीतर भगवान का तेज, सृष्टि का सत्त्व, सिद्धि का स्रोत रहता है । वह जैसा चाहे, वैसा अपने को बना सकता है ।

मनोवृत्तिया :

□मनोवृत्तियाँ सुगन्ध के समान है जो छिपाने से नहीं छिपती।

मन्दिर :

□मन्दिर वह पवित्र स्थान है जहा मानव त्रय-तापों से रहित होकर आत्म शान्ति का अनुभव करता है और जीवन विकास के सोपान पर अपने कदम रखता है।

□सत्य और विश्वास ससार के मन्दिर है।

मशीन और मनुष्य

□'गलती न करने वाली मशीन' और 'गलती करने वाले मनुष्य इन दोनो मे से किसी एक को पसन्द करना पड़े तो मनुष्य को ही पसन्द करना पड़ेगा। गलतफहमी से बहुधा सत्य का जन्म होता है, पर मशीनो से किसी भी दशा मे मनुष्य नही निकल सकता।

मस्तिष्क :

□मस्तिष्क की शक्ति अभ्यास है, आराम नही।

□एक निर्बल मस्तिष्क अणुवीक्षण यन्त्र की भाति है जो छोटी-छोटी निरर्थक वस्तुओ को बडा भले ही कर दे, किन्तु बड़ी वस्तुओ को नही देख सकता।

महत्ता :

□केवल शक्ति सम्पन्न होना ही महत्त्वपूर्ण नही। शक्ति का सन-

हित मे प्रयोग करने से ही महत्ता प्राप्त होती है।

महत्त्वाकांक्षा :

□शान्ति ठीक वहाँ से शुरू होती है, जहा महत्त्वाकाक्षा का अन्त हो।

□अपने विश्वास का शिकार बनकर मर जाना प्रशसनीय है, अपनी महत्त्वाकाक्षा का धोखा खाकर मरना दुःखद है।

महाजन

□महापुरुषो द्वारा निर्दिष्ट पथ ही सर्वत्र शान्तिदायक है—"महाजनो येन गतः स पन्थ॰"

महादान

□तीर्थंकरो ने जो कुछ देने योग्य था वह दे दिया है, वह समग्र-दान यही है—ज्ञान, दर्शन और चारित्र का उपदेश।

महान :

□जो अपने मानसिक विचारो पर कावू कर सकता है वह विश्व मे महान है।

□जाननेवाला नही, किन्तु ज्ञान को पचानेवाला महान है।

□पूजा करवाने मे पहले पत्थर को छैनी और हथोडी की कितनी मार सहनी पडती है, उसी प्रकार महान बनने से पूर्व मनुष्य को भी सघर्षों और यातनाओ का मुकावला करना पडता है।

□याद रखो, जो महत् है, बडा है, वही दे सकता है, वही देता

है। इसे उलटकर यूँ भी कह सकते है कि जो दे सकता है, देता है, दाता है, वही महान है। जिनके पास होता है वही देता है। तुम्हारे पास जो है उसे देते चलो, बाटते चलो।

महान आत्मा

☐ भयकर तूफान और घनघोर मेघ गर्जनाये जिस प्रकार सूर्य-चन्द्र को आतकित नही कर सकती उसी प्रकार महान आत्माओ को सुख-दुःख हानि-लाभ विचलित नही कर सकते।

महान चिकित्सक :

☐ प्रकृति, समय और धैर्य—ये तीन सर्वश्रेष्ठ और महान चिकित्सक है।

महानपुरुष :

☐ दुनिया मे दुनिया की तरह रहना आसान है, एकान्त मे अपनी तरह रहना आसान है। लेकिन महान व्यक्ति वह है जो दुनिया मे रहकर भी एकान्त की मधुरता और स्वतन्त्रता को कायम रखें।

महान व्यक्ति :

☐ महान व्यक्ति के तीन लक्षण है—उदारतापूर्वक योजना, मानवतापूर्वक अमल साधारण सफलता।

☐ अधूरा कार्य छोडना निम्न स्तर के व्यक्ति का कार्य है। महान व्यक्ति वे है जो अपना कार्य अधूरा नही छोडते।

महापाप :

☐अपनी आवश्यकता की पूर्ति करना मनुष्य का कर्त्तव्य है लेकिन दूसरो का विनाश करके अपनी आवश्यकता के महल खडा करना महापाप है।

महापुरुष :

☐उच्च आत्माओ की समस्त क्रियाए आत्मलक्षी हुआ करती है अर्थात् उनकी वाह्य क्रियाओ मे एक आध्यात्मिक सकल्प ही प्रधान रूप से परिलक्षित हुआ करता है।

☐महापुरुप अपने बडे-बडे गुणो को अल्प ही देखते हैं अत. वे अपने गुणो की प्रशसा नही करते। छोटा व्यक्ति अपने अल्प गुणो को भी बडा मानता है और उसकी वार-वार प्रशसा करता फिरता है।

☐महान पुरुषो के चित्त वज्र से भी अधिक कठोर तथा फूल से भी अधिक कोमल होते है।

माता :

☐बालक का भाग्य सदैव उसकी माता के द्वारा निर्मित होता है।

☐माता-माता ही है, जीवित वस्तुओ मे वह सवसे अधिक पवित्र है।

☐माता का हृदय बच्चे की पाठशाला है।

☐पूजा के योग्य सबसे प्रथम देवता माता है।

"मातृदेवो भव" माता की सेवा करो।

मातृवात्सल्य :

☐धायमाता को रखने पर भी पुत्र के प्रति वह ममता नहीं आ सकती जो माता की होती है। मातृवात्सल्य माता के पास ही है, आया मे नहीं।

मानव :

☐मनुष्य को भगवान नही, किन्तु सर्वप्रथम मानव बनने के लिए प्रयत्न करना चाहिए। मनुष्य बनने के लिए व्यापार मे नीति-परायणता, हृदय मे दया-करुणा व जीवन मे सदाचार को स्थान देना चाहिए।

मानव और पशु

☐मानव और पशु मे क्या अन्तर है ? मानव स्वय प्रेरित होकर कर्तव्य का पालन करता है जबकि पशु दूसरो से प्रेरित होकर काम करता है।

मानव जीवन :

☐मानव का दानव होना उसकी हार है। मानव का महामानव होना उसका चमत्कार है और मनुष्य का मानव होना उसकी जीत है।

☐मानव-जीवन का एक सस्मरण भी जीवन-चरित्र से विशाल

ग्रन्थ के समान है।

मानवता के दीप

□मानवता के दीप ही ससार को प्रकाशित करेंगे।

मानवता कि त्रिवेणी :

□समन्वय, सहयोग एव सहानुभूति ही मानवता की त्रिवेणी है।

मानव देह की अमूल्यता :

□एकबार पिंजरे से निकला हुआ पछी पुनः उस पिंजरे मे नही आता। उसी प्रकार मानव देह से निकला हुआ आत्मा का पुनः मानव देह मे आना दुर्लभ है।

मानव देह मे पशु :

□गन्ने को पशु भी खाता है और मनुष्य भी खाता है किन्तु अन्तर इतना ही है कि पशु छिलके भी निगल जाता है, जबकि मनुष्य सिर्फ रस पीता है। जो बुराई-भलाई का विवेक किए बिना सब कुछ लेता जाए वह मानवदेह मे पशु है।

मानवभव की सफलता :

□मानवभव की सफलता मौज-शौक मे नही, किन्तु त्याग व धर्म की सुन्दर आराधना मे है।

मानस-मल :

□शोक, क्रोध, लोभ, काम, मोह, आलस्य, ईर्ष्या, मान, सन्देह, पक्षपात, गुणवान के प्रति दोषारोपण, निन्दा—ये बारह मानस-

मल है जिनके कारण वुद्धि भ्रष्ट होती है।

मानसिक सुख :

☐सुख दो प्रकार के होते हैं—एक कायिक सुख और दूसरा मानसिक सुख। इन दो सुखो में मानसिक सुख श्रेष्ठ है।

माया

☐माया जिस दिन से वनी उसी दिन से कह रही है, कि मेरे पास मा—मत, या—आओ।

☐एक माया-कपट हजारो सत्यो का नाश कर डालती है। और सैंकडो मित्रो को शत्रु वनाती है।

☐पूजा का अर्थी, यश का कामी और मान-सन्मान की कामना करने वाला साधक वहुत पाप का अर्जन करता है और माया शल्य का आचरण करता है।

मायावी

☐मुझे ऐसे आदमी से नफरत है जिसके वाहरी शब्द उसके भीतरी विचारो को छिपाते है।

☐जो मनुष्य तप का चोर, वाणी का चोर, रूप का चोर, आचार का चोर और भाव का चोर होता है, वह किल्विषिक देव-योग्य कर्म करता है। किल्विषिक देव मर कर गूगा वनता है नरक तिर्यंच मे जाता है जहाँ वोधि अत्यन्त दुर्लभ होती है।

मित्र :

☐ मित्र की तकलीफो के साथ तो सभी सहानुभूति दिखाते हैं पर मित्र की सफलता पर प्रसन्नता प्रकट करना तो विरले ही जानते है ।

☐ मित्र की आखो से ससार को देखो । जितना ही हम दूसरो के हृदय से अपना हृदय जोडेगे, उतने ही हम मित्रो की सख्या मे वृद्धि करेंगे ।

मित्रता :

☐ जो मित्रता वरावर की नही होती, उसका अन्त सदैव घृणा मे होता है ।

☐ शायद सवसे आन्ददायक मित्रताए वे हैं जिनमे वडा मेल है, वडा झगडा है और फिर भी वडा प्यार हैं ।

☐ ससार मे केवल मित्रता ही एक ऐसी चीज है, जिसकी उपयोगिता के सम्वन्ध मे दो मत नही हो सकते ।

☐ वहसवाजी न करने से, मित्र की सम्मति का सम्मान करने से, अपनी गलती स्वीकार करने से एव मित्र की पीठ पीछे निन्दा न करने से मित्रता अक्षुण्ण रहती हैं ।

☐ मित्रता सर्वश्रेष्ठ सम्पत्ति है ।

☐ मुझे ऐसी मित्रता नही चाहिए, जो मेरे पावो मे उलझकर आगे चलने मे वाधक हो ।

मित्रता के योग्य :

☐आवश्यकता केवल इस बात की है हम औरों के लिए उतने ही सच्चे हों, जितने हम अपने लिए हैं, ताकि मित्रता के योग्य हो सकें।

मिथ्या वचन क्या है ?

☐मृषावाद, चुगली, निन्दा, क्रोध के आवेश में बोले गये वचन, कटु वचन, बकवास ये सब मिथ्या वचन हैं।

मीठाबोल

☐अपनी इच्छा से अप्रिय वचन मत कहो क्योंकि ईश्वर का निवास प्रत्येक प्राणी के अन्दर है। किसी के दिल को मत दुखाओ क्योंकि प्रत्येक आत्मा दुनिया का अनमोल रत्न है।

मुक्ति :

☐वासना का आसक्ति का, आत्यन्तिक क्षय ही मोक्ष है। और यही जीते-जी मुक्ति है।

☐जिनका अहङ्कार तथा मोह नष्ट हो गया है, जिन्होंने आसक्ति को जीत लिया है, जो अध्यात्म भाव में नित्य निरत है, जिन्होंने कामभोगों को पूर्णरूप से त्याग दिया है, जो सुख-दुःख आदि के सभी द्वन्द्वों से मुक्त हैं, वे अभ्रान्त ज्ञानीजन अवश्य ही अक्षय अविनाशी पद को प्राप्त होते हैं।

मुनि :

☐लाभ-अलाभ, सुख-दुःख, जीवन-मरण, निदा-प्रशसा, मान-अपमान मे सम रहने वाला मुनि होता है।

मुसीबते :

☐जो दूसरो के लिए जियेगा उस पर बडी-बडी मुसीबते पडेगी पर वे सब उसे तुच्छ जान पडेगी। जो अपने लिए जियेगा उस पर छोटी-छोटी मुसीबते पडेगी फिर भी वे उसे बडी कठिन मालूम पडेगी।

मुस्कान

☐यदि हम जीवन पथ पर फूल नही बिखेर सकते तो कम से कम हम उस पर मुस्काने तो बिखर दे।

☐प्रीति की एक भाषा है, वह है अपने ओठो पर मुस्कान और हृदय मे प्रसन्नता।

मुस्कुराहट .

☐मुस्कुराहट आपके जीवन को आनन्द की लहरो से भर देती है। जीवन मे जो हँसता रहता है वह सौ वर्ष तक जीता है। रोता है वह अपनी आयु को घटाता है।

☐महापुरुषो का जीवन कष्टमय जीवन है। वे कष्टो का मुकाबला हसते हुए करते हैं। क्योकि हसते रहने से कष्टअपने आप विलीन हो जाते है।

मूर्ख :

□मूर्ख दो प्रकार के होते हैं—एक वह जो अपराध को अपने अपराध के रूप मे नही देखता है और दूसरा वह जो दूसरे के अपराध स्वीकार कर लेने पर भी क्षमा नही करता है।

□पर्वतो और वनो मे वनचरो के सग विचरना श्रेष्ठ है। परन्तु मूर्खों के सग स्वर्ग मे भी रहना बुरा है।

मूर्ख और विज्ञ :

□मूर्ख व्यक्ति जीवन भर भी पण्डित के साथ रह कर भी धर्म को नही जान पाता जैसे कि कलछी दाल के रस को।
विज्ञ पुरुष एक मुहूर्त भर भी पण्डित की सेवा मे रहे तो वह शीघ्र ही धर्म के तत्त्व को जान लेता है जैसे कि जीभ दाल के स्वाद को।

मूर्खता :

□किसी भी कार्य के प्रारम्भ में दुर्भाग्य की आशका करने से अधिक मनहूस और मूर्खतापूर्ण वस्तु कोई नही। आने से पहले ही अमंगल की आश लगाना पागलपन ही है।

मूल तत्त्व :

□"एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्ति"
एक सत्य को, एक ही तत्त्व को विद्वान लोग भिन्न-भिन्न प्रकार से कथन करते हैं।

मूल्य :

□यदि तू अपना मूल्य आकना चाहता है तो अपना धन, जमीन पदवियो को अलग रख कर अपने अन्तरग की जाँच कर

मूल्य-मापन .

□मानव के माने हुए मूल्या से प्रकृति द्वारा प्रदत्त वस्तुओ का अवमूल्यन नही हो सकता, मोती, हीरे, पन्ने से क्या धान्य का मूल्य कम है ?

मृत्यु

□अरे मानव ! तू मृत्यु से क्यो डर रहा है ? डरने से क्या मृत्यु तुझे छोड देगा ? जो जन्मता है वह अवश्य मरता है, क्या यह तू नही जानता ? मृत्यु के लिए राजा और रक समान है। यदि तू सचमुच ही मृत्यु से डरता है तो जन्म का कारण जो पाप प्रवृत्ति है उसे तिलाजलि देने के लिये प्रयत्नशील बन !

□एक बार किसी साधक से पूछा—आप मृत्यु से नही डरते हैं तो मृत्यु से बचने की प्रार्थना क्यो करते हो ?

साधक ने जवाब दिया—मृत्यु एक गद्दीनसीन राजा है यदि वह शान्तिपूर्वक मेरे सामने अकेला आये तो मैं चुपचाप समर्पित हो जाऊ ! किन्तु वहअकेला कहाँ आता है ? उसके छोटे-मोटे बदमाश सिपाही ही बिमारियो के रूप मे आकर मुझे पीडा दे रहे हैं अत उनके साथ सघर्ष करना नही पडे इसीलिए अमरता की प्रार्थना

कर रहा हूं।

मैं कौन हूं ?

☐मैं न तो शरीर हूँ, न रूपी हूँ और न मन हूँ, किन्तु शरीर और मन से परे निज बोध रूप अवर्णा, अरूपा चेतन तत्त्व हूँ।

मैत्री :

☐मैत्री एक मधुर जिम्मेदारी है।

मैत्री-भाव .

☐मित्रस्याहं चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे।
मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे।
मैं, मनुष्य क्या, सब प्राणियों को मित्र की दृष्टि से देखूं। हम सब परस्पर मित्र की दृष्टि से देखें !

मैला डस्टर :

☐जो हर समय दूसरों के अवगुण को देखता है और हर घड़ी पराई निन्दा करता है वह एक प्रकार का ब्लैक बोर्ड को साफ करने वाला "मैलाडस्टर" है।

मोहावरण :

☐सम्पत्ति और विषय भोग में लगा हुआ मन छिलके में चिपटी हुई सुपारी की तरह है। जब तक सुपारी नहीं पकती तब तक अपने ही रस से वह छिलके से चिपटी रहती है लेकिन जब रस सूख जाता है तब सुपारी छिलके से अलग हो जाती है, खड़खड़ाने

उसकी आवाज सुनायी पडती है । उसी प्रकार सम्पत्ति और सुखोपभोग का रस जब सूख जाता है तब वह मनुष्य मुक्त हो जाता है ।

मोही-भावना :

□शस्त्र या विष-भक्षण के द्वारा, अग्नि मे प्रविष्ट होकर या पानी मे कूद कर आत्महत्या करना, मर्यादा से अधिक वस्तुए रखना—मोही भावना है ।

मोक्ष

□वस्तुतः विवेक ही मोक्ष है ।

मोक्ष का अधिकारी :

□जिसने विषय कषाय पर विजय प्राप्त करली है । लौकिक क्रियाओ पर नियत्रण कर लिया है । बाह्य-आभ्यन्तर परिग्रह से जो रहित है और जिसका मन नियन्त्रित है और जो विदेहभाव मे रमण करता है, वह सच्चा मोक्ष का अधिकारी है ।

मोक्ष का मार्ग :

□गुरु और वृद्धो की सेवा करना, अज्ञानी जनो का दूर से ही वर्जन करना, स्वाध्याय करना, एकान्तवास करना, सूत्र और अर्थ का चिन्तन करना तथा धैर्य रखना—यह मोक्ष का मार्ग है ।

००

यथादृष्टि तथासृष्टि .

□सृष्टि सुख-दुःख देने के लिए नहीं रची गई। वह तो जैसी है वैसी ही रहेगी। हमारा मन जिस दृष्टिकोण से देखता है और जो उसके मतलब की चीज होती है उसका आरोप सृष्टि पर कर लेता है। सृष्टि पिपल के वृक्ष की तरह है, पक्षी उसके फल खाते हैं, आदमी उसकी शीतल छाया में बैठता है और कोई उस पर रस्सी लटका कर आत्महत्या भी कर लेता है। इस तरह मनुष्य का मन स्वयं ही सुख-दुःखों का सर्जन करता है और उसका आरोप सृष्टि पर लगाता है।

□जो अपने शुद्धस्वरूप का अनुभव करता है वह शुद्धभाव को

प्राप्त करता है, और जो अशुद्धरूप का अनुभव करता है वह अशुद्ध भाव को प्राप्त होता है।

याद रखो .

☐भारत के निवासियो ! तुम पश्चिम की रीति रिवाजो मे पड कर अपनी गरिमा को मत भूलो।

☐नारी तेरा नारित्व पाश्चात्य मेडम की वेषाभूषा मे नही, बल्कि तेरे नारित्व का आदर्श सीता, दमयन्ती, सावित्री, चन्दनबाला और मृगावती है।

☐हे मानव ! तेरा उपास्य फ्रायड, लेनिन या माओ नही, किन्तु त्यागमूर्ति भ० महावीर, बुद्ध, राम और कृष्ण है।

युद्ध :

☐युद्ध मनुष्यता के लिए सबसे भयानक महामारी है, यह धर्म को मिटा देता है, राष्ट्रो का विनाश कर देता है और परिवारो का विध्वस कर देता है।

रहस्य :

☐जो व्यक्ति अपने रहस्य को छिपाए रखता है वह अपनी कुशलता अपने हाथ मे रखता है।

☐जो व्यक्ति अपना रहस्य अपने सेवक को बताता है वह सेवक को अपना स्वामी बना लेता है।

रागासक्ति :

☐पश्चाताप के बीज युवावस्था में रागरंग द्वारा बोए जाते हैं, किन्तु उनका फल वृद्धावस्था में दु:ख-भोग द्वारा प्राप्त किये जाते हैं।

राम कौन ?

☐"रमन्ते योगिनो इति रामः"

जिसमें योगीजन रमण करते हैं, वह राम है। जो आत्मा में रमण करता है वह राम है।

रुचि :

☐हमारी रुचि हमारे जीवन की कसौटी है और हमारे मनुष्यत्व की पहचान है।

रोगोत्पत्ति के कारण :

☐अधिक खाने से, बिना भूख के खाने से, अधिक सोने से, अधिक विषय के सेवन से, मिर्च मसाले के अधिक खाने से तथा मलमूत्र के रोकने से रोग पैदा होते हैं।

रोष का अन्त :

☐रोग और रोष का अन्त उपयोग पर होता है।

लक्ष्मी :

☐ उन्मादं मदनमदीर्णं मूर्तं,
निद्रानिमिलं व्यसनेष्वसक्तम् ।

शूर कृतज्ञ दृढसौहृद च,
लक्ष्मीः स्वय याति निवास हेतो ॥

जो उत्साही है, दीर्घसूत्री (आलसी) नही है, कार्य करने की विधि को जानता है, किसी प्रकार के व्यसन मे आसक्त नही है, बहादुर है,किये हुए उपकार को मानता है और जिसकी मैत्री दृढ होती है, ऐसे सज्जन के पास रहने के लिए लक्ष्मी स्वय ही उपस्थित हो जाती है ।

लक्ष्य

□समस्त कर्म का लक्ष्य आनन्द की ओर है, एव आनन्द का लक्ष्य कर्म की ओर है ।

लक्ष्मी की सफलता :

□लक्ष्मी की सफलता उसके सग्रह मे नही, किन्तु उसके सदुपयोग मे है ।

लक्ष्यसिद्धि :

□जिस प्रकार धनुर्धर बाण के बिना लक्ष्यवेध नही कर सकता उसी प्रकार साधक भी बिना ज्ञान के मोक्ष के लक्ष्य को नही प्राप्त कर सकता ।

लघुता

□दूसरे को छोटा समझना बहुत ही आसान है, किन्तु अपने आपको छोटा समझना अत्यधिक कठिन है ।

लज्जा

☐अपने हाथ मे ऐसे अकृतकार्य नही करना चाहिए जिससे लोगों के सामने जाने मे लज्जा का अनुभव हो।

वचन .

☐जीभ तलवार है, उसके घाव भयकर होते है। लोहे के तिप-चुभे तीरो की पीड़ा कुछ क्षण बाद शान्त हो सकती है, किन्तु वाणी के बाणो की पीडा कभी शान्त नही होती।

☐"वाया दुरुत्ताणि.. .महब्भयाणि" वाणी से बोले हुए दुष्टवचन महाभय के कारण होते हैं।

☐बाईबल मे कहा है—जबान के वार मे जितने आदमी मरते है उतने तलवार के वार से नहीं।

☐जिस वचन पर अमल नही हो सकता वह वचन बेकार है।

वचनगुप्त :

☐जो वाणी की कला मे कुशल नही है और वचनं की मर्यादाओ को नही जानता, वह मौन रहना हुआ भी वचन गुप्त नही है।

☐जो वाणी की कला मे कुशल है, वचन की मर्यादा का जानकार है वह वाचाल होते हुए भी 'वचनगुप्त' है।

वफादार :

☐वह व्यक्ति वफादार नहीं हो सकता जो तुम्हारी हत्याग की

प्रशसा करता हो, वफादार तो वह है जो प्रसग आने पर तुम्हारी कटु आलोचना भी करता हो। और तुम्हे गलत कामो से बचाता हो।

वर्तमान ·

☐न अतीत के पीछे दौडो और न भविष्य की चिन्ता मे पडो। क्योकि जो अतीत है वह तो नष्ट हो गया और भविष्य अभी आ नही पाया। अत. वर्तमान को भी उज्ज्वल बनाओ।

वशीकरण मत्र .

☐मित्र को सरलता से, शत्रु को युक्ति से, लोभी को धन से, स्वामी को कार्य से, विद्वान को आदर से, युवती को प्रेम से, बन्धुओ को समानता के व्यवहार से, महाक्रोधी को क्षमा से, गुरु को अभिवादन से, मूर्ख को कहानिया सुना कर, विद्वान को विद्या से, रसिक को सरसता से और सबको शील से वश मे करना चाहिए।

वाचन-मनन :

☐ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा से वाचन मनन करना यह कर्तव्य निष्ठा का सहज और प्रामाणिक पुरुषार्थ है।

वाणी .

☐सज्जन पुरुषो के कण्ठ मे सुधा रहती है। अर्थात् उनकी वाणी मे मधुरता होती है।

□ वाणी से बढ़कर चरित्र की निश्चित परिचायिका और कोई चीज नहीं।

विग्रह के कारण :

□ धन, सत्ता, स्त्री और मताग्रह ये विग्रह के चार कारण हैं।

विचार :

□ विचार बीज है और आचार उसके कार्य। यदि बीज पवित्र है तो उसके कार्य फल फूल निश्चित पवित्र होंगे। यदि विचार पवित्र है तो आचार निश्चित रूप से पवित्र होगा।

□ मनुष्य वस्तुओं के ममत्व को छोड़ सकता है किन्तु कदाग्रह को नहीं। मनुष्य को चाहिए कि कदाग्रह का त्याग कर जीवनोपयोगी नये विचारों को अपनाए।

विचारक्रान्ति :

□ जिस प्रकार वर्षा का पानी पहाड़ों पर बून्द-बून्द करके गिरता है, वहां से प्रवाहित होता हुआ घाटियों में सकरे मार्ग से निकल कर एक नाले का रूप धारण करता है और नाला नदी में मिल कर एक विशाल रूप धारण कर लेता है। इसी प्रकार विचार धारा भी एक श्रेष्ठ मानव के मस्तिष्क में अवतरित हुई, फिर वह एक से दूसरे में होती हुई जन सामान्य में पहुंच जाती है जहां वह क्रान्ति तथा संघर्ष का रूप धारण कर लेती है।

विचारणीय

□कैसा समय है ? कौन-कौन मित्र है ? कैसा देश है ? क्या आमदनी है ? क्या व्यय है ? मेरा क्या स्वरूप है ? और मेरी शक्ति कितनी है ? मनुष्य को समय-समय पर इन बातो का विचार करना चाहिए ?

विचारबल

□बाहुबल की अपेक्षा विचारबल अधिक प्रभावशाली होता है ।

विचारो की बिमारी

□विचार करना आवश्यक है, किन्तु अधिक और निरर्थक विचार करना बीमारी है ।

विकार

□जैसे वात, पित्त और कफ के सम्मिलन से सन्निपात हो जाता है और मनुष्य उससे अपना भान भूल जाता है, वैसे ही काम, क्रोध ओर लोभ जब आ मिलते है तो प्राणियो की दुर्गति कर डालते है ।

विजय

□इस जीवन मे विजय केवल तभी हो सकती है जब मानव-शरीर सुख को, भोग की वासनाओ को भूल कर मोह उत्पन्न करने वाली वस्तुओ मे ध्यान हटाकर केवल अपने लक्ष्य की ओर ध्यान दे ।

☐लोभी को धन से, क्रोधी को मधुरता से, मूर्ख को सद्व्यवहार से एवं विद्वान को विश्वास से जीतना चाहिए।

विजयी :

☐विजयी वही है, जो हारकर भी हसता रहता है।

विडम्बना

☐कैसी विडम्बना है! मनुष्य पुण्य का फल तो चाहता है, किन्तु पुण्य करना नही चाहता और पाप करता है, किन्तु उस पाप का फल नही चाहता।

विद्या :

☐विद्या धर्म की रक्षा के लिए है न कि धन जमा करने के लिए।

विनय और उसका फल :

☐धर्म का मूल विनय है और उसका अन्तिम फल है मोक्ष। विनय के द्वारा साधक कीर्ति, श्लाघनीय श्रुत और समस्त इष्ट तत्त्वो को प्राप्त करता है।

विनाश :

☐नाश की पहली अवस्था बुद्धि विपर्यय है। बुझने वाला दीपक बुझने से कुछ पहले एकबार चमकता है।

विपत्ति :

☐विपत्ति सत्य का पहला रास्ता है।

विपत्तिस्थान

☐अविवेक ही समस्त विपत्तियो का स्थान है।

विरोध :

☐विरोध प्रचार की चावी है।

विरोधी :

☐विरोधी को जवाव देते समय विचारो को तरतीव दो, शब्दो को नही।

विरोधी पर विजय

☐अपकारी को शस्त्र से नही मारकर उपकार से मारना चाहिए। सज्जन इसी नीति से अपने विरोधी पर विजय प्राप्त करते है।

विवेक :

☐जीवन की सभी छोटी वडी क्रियाओ मे विवेकी की आवश्यकता है। विवेकी व्यक्ति अन्धकार मे भी प्रकाश खोज लेता है।

विवेक शून्य शास्त्रवाचन :

☐यदि आप आख वन्द करलें और उस पर दस हजार मील दूर तक देखने वाली दूरवीन लगा दे तो क्या दिखाई देगा ? यही वात विवेक की आख और शास्त्र की दूरवीन के सम्वन्ध मे है। विवेक-ज्ञान के विना शास्त्र क्या कर सकता है ?

विश्वास :

□विश्वास न तो मांगा जाता है और न खरीदा जाता है, वह तो अपने आप ही उपजता है। जिस प्रकार प्रेम। विश्वास का कोई आधार होना चाहिए, नही तो वह अन्धविश्वास होता है।

□किसी के छिपे अवगुण प्रकट न करो, क्योंकि उसकी बदनामी करने से तुम्हारा विश्वास घट जायगा।

□जिसका प्रभु की कृपा पर अनन्त विश्वास है उसके लिए कृपा की नदी सदा बहती रहती है।

□विश्वास के बल पर ही विदेश मे गए हुए पति के लौटने की पत्नी प्रतीक्षा करती रहती है। विश्वास शक्तिसम्पन्न है।

□विश्वास के बल पर ही मानव अपने लक्ष्य तक पहुंचता है।

□विश्वास अपने आप मे अमर औषधि है। अपने आप में ऊंचे आदर्शों मे जो श्रद्धाशील नही, वह कभी भी विश्वास पात्र नही बन सकता।

□अपने ऊपर असीम विश्वास स्थापित करना और अकेले बैठ कर अन्तरात्मा की ध्वनि सुनना वीर पुरुषों का काम है।

□शत्रु का प्रेम, स्वार्थी की प्रशंसा, ज्योतिषी की भविष्यवाणी, और धूर्त के सदाचार पर हमें विश्वास नहीं करना चाहिए।

वृत्तियां :

□जब हमारी वृत्तियां आत्मा की ओर जाती हैं तो हम ऊपर

उठते है और जव शरीर की ओर मुडती है तो हम नीचे गिरते है।

वेग-आवेग और सवेग

☐मन गतिशील है। वेगवान है। वेग जव अपनी मर्यादा को लाघता है तव वह आवेग वन जाता है। मन का आवेग ही अशान्ति है। आवेग को रोकना ही सवेग है। सवेग मे ही आत्म-शान्ति का अनुभव होता है।

वेदना '

☐यदि आत्मा से परमात्मा वनना है तो कष्ट को महना ही पडेगा। यदि नाक मे मोती पहनना है तो नाक छेदन का कष्ट सहना ही पडेगा। माता वनने के लिए प्रसव की वेदना सहनी ही पडेगी।

व्यस्तता :

☐व्यस्त मनुष्य को आसू वहाने के लिए अवकाश नही।

व्यर्थ

☐अप्रतिभाशाली की विद्या, कजूस का धन, और डरपोक का वाहुवल पृथ्वी पर ये तीनो व्यर्थ है।

व्यवहार :

☐मधुर व्यवहार मनुष्य को जनप्रिय वनाता है।

☐व्यवहार वह दर्पण है, जिसमे प्रत्येक व्यक्ति का अपना प्रति-

चित्र दिखता है।

व्यवहार और अध्यात्म :

☐अध्यात्म और व्यवहार जीवन के अन्योन्याश्रित पक्ष है। व्यवहार-शून्य अध्यात्म गतिशील नही होता तो अध्यात्म-शून्य व्यवहार प्राणवान नही होता। दोनो का सामजस्य ही रसमय होता है।

व्यष्टि मे समष्टि :

☐जिस प्रकार नदी महानदी मे, महानदी समुद्र मे विलीन होकर अपना अस्तित्व समाप्त कर देती है। उसी प्रकार जो व्यक्ति सघ समाज मे सम्मिलित हो जाता है उसका अपना अस्तित्व समाप्त हो जाता है। ☐

श

शक्ति :

☐सबलता ही सजीवता है और दुर्बलता निर्जीवता ।

☐जिसके पास अपनी शक्ति नही उसे भगवान भी शक्ति नही देता ।

शत्रु और मित्र :

☐इस ससार मे कोई भी किसी का मित्र नही है और न कोई किसी का शत्रु । अपना सद्-असद् व्यवहार ही मित्रता और शत्रुता का कारण बनता है ।

शब्द का प्रयोग

☐यदि बोलना उचित है और आवश्यक है तो ऐसा बोलो जिससे

स्व पर का हित हो। शब्द का निरर्थक अपव्यय मत करो। हित मित एव सत्य बोलो। हित मित सत्य वद।

शब्दज्ञानी :

☐दर्शन और धर्म की चर्चा करने वाला शब्द ज्ञानी है। और स्वानुभव की बातें करने वाला आत्मज्ञानी। धर्म की चर्चा करने से कोई व्यक्ति आत्मज्ञानी नही हो सकता वह तो शब्दो का कोष मात्र है।

शराफत .

☐जिसमे शराफत और ईमानदारी नही उसके लिए समस्तज्ञान कष्टकारी है।

शल्य

☐जैसे नेत्रो मे थोडी सी रजकण भी उसे चैन से आराम नही लेने देती वैसे ही जिसके हृदय मे शल्य है, वह चैन से बैठ नही सकता।

शाति .

☐वह मनुष्य, चाहे वह राजा हो या किसान, सबसे भाग्यवान है जिसे अपने घर मे शान्ति मिलती है।

☐दुनिया की तमाम शान-शौकत से बढकर है आत्मशान्ति और शान्त अन्तरात्मा।

शांति का उपाय :

☐अपनी आवश्यकता को घटाकर दूसरे के अभाव की पूर्ति करना ही शान्ति का उपाय है।

शारीरिक श्रम ·

☐मानसिक व्यग्रता नष्ट करने का अव्यर्थ साधन है, शारीरिक श्रम।

शास्त्र और अनुयायी :

☐किसी ने सन्त से पूछा—"तुम्हारा शास्त्र क्या है? किस भाषा में है? और अनुयायी कौन है?" सन्त ने कहा—"चिन्तन और विचार मेरा शास्त्र है। आचार उसकी भाषा है। उसको जो भी पढ़े और उस पर चले वही मेरा अनुयायी है।"

शाश्वत आनन्द .

☐विशुद्ध, शाश्वत आनन्द के दो ही उद्गम है—अपने को देना और अपने को पाना, समर्पण और साक्षात्कार।

शाश्वत जीवन

☐हे प्रभु! ऐसी कृपा करो कि मेरा प्रयत्न दूसरो द्वारा समझा जाने का उतना न हो, जितना कि दूसरो को समझने का, प्यार किये जाने का उतना न हो, जितना कि प्यार देने का। क्योंकि देने मे ही हम पाते है, माफ करने मे ही माफ होते है, दूसरो के लिए मरने मे ही शाश्वत जीवन पाते है।

शास्त्रार्थ :

☐तालाब हो या नदी हो—किनारे पर खडे-खडे हजार वर्षतक तैरने की कला पर शास्त्रार्थ करने से व्यक्ति को तैरना नही आ सकता। धर्म के ऊपर शास्त्रार्थ करने मे मनुष्य धार्मिक नही बन सकता।

शिक्षक :

☐शिक्षक राष्ट्र की सस्कृति के चतुर माली होते है। वे संस्कारों की जडो मे खाद देते हैं और अपने श्रम से उन्हे सीच-सीच कर महाप्राण शक्तिया बनाते हैं।

शिक्षण ·

☐वाणी से विचार गहरे हैं। विचारमे भावना गहरी है। व्यक्ति दूसरे मे जितना नही सीख सकता जितना खुद से सीखता है।

शील

☐शील मानव जीवन का अनमोल रत्न है। इसे जिस मनुष्य ने खो दिया उसका जीवन ही व्यर्थ है। वह चाहे जितना धनी अथवा भरे पूरे घर का हो उसका कोई मूल्य नही रहता।

शील का परिवार :

☐दया, दम, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य, सन्तोष, सम्यक् दर्शन, ज्ञान और तप ये सब शील के परिवार है।

शुद्ध सत्य :

☐निर्मल अत करण को जिम समय जो प्रतीत हो वही सत्य है। उस पर दृढ रहने से शुद्ध सत्य की प्राप्ति हो जाती है।

शुद्धि :

☐सत्कर्म, सद्विद्या सद्धर्म, शील और उत्तम जीवन से ही मनुष्य शुद्ध होते है। उत्तम जाति, गोत्र या धन से नही।

शून्य :

☐पुत्रहीन के लिये घर सूना होता है, जिसका सन्मित्र नही है उसका समय सूना होता है, मूर्ख के लिए दिशाये सूनी होती है और दरिद्र के लिए सब कुछ सूना होता है।

शैतान की दुकान

☐सावधान रहना। यह दुनियाँ शैतान की दुकान है। इस मायावी दुनिया की दुकान मे इर्ष्या, लोभ, वासना जैसी अनेक आकर्षक वस्तुएँ है जो मूल्य मे सस्ती हे किन्तु उसे लेने के बाद सर्वनाश निश्चित है।

शैशव .

☐शैशव मे समस्त मानवीय सद्गुणो के अकुर विद्यमान रहते है। जो माता-पिता चतुर माली की भाँति अपने बच्चे मे उनकी देख रेख रखते हैं वे उसका उचित पुरस्कार पाते हैं।

शोभा :

☐सभी पदार्थ अपने-अपने स्थान पर ही सुशोभित होते हैं। स्थानभ्रष्ट होने पर नही। काजल आँख मे सुशोभित होता है तो मेहन्दी हाथो और पैरो मे।

☐धीरता से दरिद्रता सुशोभित होती है। स्वच्छता से कुवस्त्र भी शोभित होता है। कुरूपता सुशीलता से शोभा देती है और सदाचरण से मानव सुशोभित होता है।

शोषक :

☐जोंक खराब खून का शोषण करती है किन्तु गृह कलह, वैर, समाज के परिवार के स्वस्थ खून का शोषण करता है।

श्रद्धा :

☐श्रद्धा वस्तुत: निराश हृदय को मानवता, अवलम्बन और जीवन देने वाली वृत्ति है, श्रद्धा मे आत्मसमर्पण होता है।

☐श्रद्धा वह चिड़िया है जो प्रकाश का अनुभव कर लेती है और अन्धेरे प्रभात मे गाने लगती है।

☐श्रद्धा परमतत्त्व तक पहुँचाने वाली नौका है।

श्रम :

☐श्रम से स्वास्थ्य और स्वास्थ्य मे सुख होता है।

श्रमण :

☐जिसका मन सर्वत्र सम रहता है, वह समण (श्रमण) है।

श्रमणत्व का सार :

□श्रमणत्व का सार उपशम है ।

श्रावक :

□वही सच्चा श्रावक कहलाने का अधिकारी है, जो किसी की बहुमूल्य वस्तु को अल्पमूल्य देकर नही ले, किसी की भूली हुई वस्तु को ग्रहण नही करे और थोडे मुनाफे मे ही सतुष्ट रहे ।

श्रेयस्कर जीवन :

□सौ वर्ष तक दुराचारी तथा असयमी होकर जीना निरर्थक है, परन्तु सदाचारी तथा सयमी होकर एक दिन भी जीना श्रेयस्कर है ।

श्रेष्ठ :

□लाखो का दान देने वाले असयमी पुरुप की अपेक्षा कुछ भी न देने वाला सयमी पुरुप श्रेष्ठ है ।

□विश्वास रखिए—सब से श्रेष्ठ यदि कोई है तो वह तुम्हारी अपनी आत्मा ही है ।

□श्रमण समता से श्रेष्ठ होता है, द्वेप से नही, ब्राह्मण ब्रह्मचर्य से श्रेष्ठ होता है, वाह्य क्रियाकाण्ड से नही । तपस्वी क्षमा से श्रेष्ठ होता है क्रोध से नही । मुनि मौन से श्रेष्ठ होता है, वाचालता से नही ।

श्रेष्ठ कौन ?

☐आवश्यकता की पूर्ति जमीन भी करती है व साहूकार भी। साहुकार पूर्ति के बदले व्याज लेता है किन्तु जमीन बिना कुछ लिए एक का सहस्र गुणा कर देती है। तो बताइये श्रेष्ठ कौन है ?

श्रेष्ठ पथ

☐अच्छी सगति, अच्छी आदत व अच्छी भावना ये उन्नति के श्रेष्ठ पथ है।

श्रेष्ठ मित्र

मनुष्य के श्रेष्ठ और सच्चे मित्र है उसके हाथ की दस अगुलिया।

श्रेष्ठ मुहूर्त :

☐काम करने का वही श्रेष्ठ मुहूर्त है जब मन मे काम करने का उत्साह उत्पन्न होता है।

श्रेष्ठ साधना :

☐लोकैषणा, वित्तैषणा और कामैषणा को जीतना ही श्रेष्ठ साधना है।

संकल्प

☐सकल्प करलो, सोच समझकर कर लो, किन्तु करने के बाद उसे मत छोडो, सत्य संकल्प ही मनुष्य को ईश्वर के दरबार में पहुँचाता है।

संकल्प बल :

□विजय पाने के लिए साधनसम्पन्नता की उतनी आवश्यकता नही जितनी कि दृढ सकल्प वल की। जिसके पास सकल्प बल है, उसके पास साधन स्वय आ ही जाते है।

संकल्प-विकल्प

□थोडी-सी खटाई भी जिस प्रकार दूध को नष्ट कर देती है, उसी प्रकार राग-द्वेप का सकल्प-विकल्प सयम को नष्ट कर देता है।

सकल्प शक्ति

□हृदय की गुफा मे भरी हुई अनन्तशक्तियो के भण्डार का व्यवस्थित उपयोग करना हो तो सकल्प शक्ति का सहारा लेकर उसे सुव्यवस्थित वनाओ।

□तुम अपने सकल्प शक्ति को सिद्ध करो। तव तुम पत्थर को भी सोने मे वदल सकते हो।

संकीर्ण मन

□सकीर्ण मन वाला आदमी अफ्रिका के भैसे की तरह होता है। वह बस सीधा सामने देखता है, दाये वाये कुछ नही।

संगति

□ववूल के पेड के नीचे वैठने से काटा लगता है, वैसे ही दुष्टजनो की सगति से दुःख होना अवश्यम्भावी है।

संगति का प्रभाव :

☐बुरी वस्तु भी योग्य पुरुष को पाकर अच्छी बन जाती है। और उत्तम वस्तु भी नीच को पाकर खराब हो जाती है, जैसे अमृत पीने से राहु की मृत्यु हुई और विष के पीने से शकर के कण्ठ की शोभा बढ गई।

संघठन :

☐छोटी-छोटी वस्तुओ के सघटन से बडे-बडे कार्य सिद्ध होते हैं। घास की बटी रस्सियो के उन्मत्त हाथी भी बाँधे जाते है।

सन्त ;

☐जिस प्रकार नाव पानी मे रहने पर भी पानी से अलिप्त रहती है उसी प्रकार सन्त जन ससार मे रहकर भी उससे अलिप्त रहते है।

☐वह सभा, सभा नही, जहाँ सत नहीं और वे सन्त सन्त नहीं जो धर्म की बात नही कहते। राग, द्वेष और मोह को छोडकर धर्म का उपदेश करने वाले ही सन्त होते है।

सन्त समागम :

☐तीर्थ का फल तो समय आने पर मिलता है किन्तु सन्त समागम का फल तत्काल मिलता है।

सन्तोष :

☐अपने तुच्छ शारीरिक स्वार्थों को परित्याग करने के उपरान्त

जो सन्तोष सुख होता है वह चक्रवर्ती राजा हो जाने के सुख से भी हजारो गुणा अधिक है।

☐सुख पैसा नही मॉगता, सुख सग्रह नही मागता, लेकिन सुख सन्तोष मॉगता है।

सयम :

☐हमे अपने हृदय मे यह निश्चय कर लेना चाहिए कि भविष्य सयमी पुरुषो के हाथ मे है।

संविभाग

☐सद्गृहस्थ अपनी सम्पत्ति का चार विभाग करे। एक विभाग का स्वय उपभोग करे। दो भागो को व्यापार मे लगाये। एक भाग को धर्म कार्यों मे खर्च करे, एव एक भाग को आपत्तिकाल मे काम आने के लिए सुरक्षित रखे।

सवेग :

☐वेग को आवेग की गली मे नही किन्तु सवेग की सडक पर दौडाइये।

संशय :

☐जो अज्ञानी, श्रद्धारहित और सशयवान् है उसके लिये न यह लोक है, न परलोक है, उसे कही सुख नही है।

संसर्ग-दोष

☐जिस प्रकार मधुर जल, समुद्र के खारे जल के साथ मिलने

से खारा हो जाता है, उसी प्रकार सदाचारी पुरुष दुराचारियो के संसर्ग से दूषित हो जाता है ।

संसार

☐ससार न अच्छा है न बुरा, यह तो एक अनिर्मित लोहे के समान है जिसको जैसा चाहो वैसा बना सकते हो ।

संसार और मोक्ष :

☐चित्त जब तक चचल है, विषयो मे भटकता है तब तक ससार है । चित्त की निश्चलता, विषयो की अलिप्तता और आत्मा का ध्यान ही मोक्ष है ।

संस्कार-चिन्तन :

☐शिक्षा से सस्कार बनते है जैसी शिक्षा होगी वैसे सस्कार होगे । सस्कार को मिटाने का सामर्थ्य चिन्तन मे है । यम, नियम पालन करने से बुद्धि निर्मल होती है ।

संस्कृति :

☐जो सस्कृति महान होती है वह दूसरो की सस्कृति को भय नही देती बल्कि उसे साथ लेकर पवित्रता देती है । गगा महान क्यो है ? दूसरे प्रवाहो को वह पवित्र करती है ।

सच्चरित्र :

☐शास्त्र का थोडा-सा अध्ययन भी सच्चरित्र साधना के लिए प्रकाश देने वाला होता है । जिसकी आंखे खुली है उसको एक

दीपक भी काफी प्रकाश दे देता है ।

☐ जिस प्रकार अच्छे से अच्छा जलपान भी हवा के बिना महासागर को पार नही कर सकता । उसी प्रकार बडा से बडा तत्त्व ज्ञानी भी सच्चारित्र के बिना भवसागर को पार नही कर सकता ।

☐ सच्चरित्र के अभाव मे केवल बौद्धिक ज्ञान सुगन्धित शव के समान है ।

सच्चा प्रेम

☐ जब मजनू ईश्वर के दरवार मे पहुँचा तो ईश्वर ने कहा—भले आदमी, जितना प्रेम तुमने लैला से किया उतना प्रेम यदि मेरे से करता तो मैं कभी का तेरे सामने आ गया होता ।
मजनू ने उत्तर दिया—यदि आप मेरे प्रेम के भूखे होते तो आपको लैला वनकरके मेरे सामने आना था ।

सच्ची आराधना .

☐ राग द्वेष रहित हृदय, सत्य वचन और पवित्रता ईश्वर की सच्ची आराधना है ।

सज्जन :

☐ सज्जन के साथ यदि कोई अपकार करता है तो वे अपनी सज्जनता को नही त्यागते जैसे चन्दन के वृक्ष को काटने पर कुल्हाडी भी महकने लगती है ।

सज्जन के लक्षण :

□व्यवहारो की शुद्धता और दूसरो के प्रति आदर, यही सज्जन मनुष्य के दो मुख्य लक्षण है।

सज्जन स्वभाव :

□सज्जनो का स्वभाव सूप के समान होता है जो दोषरूप काष्ठ आदि को दूर कर देता है और गुणरूप धान्य को अपने पास रख लेता है।

सतत कार्यशीलता :

□यदि हमे स्वस्थ और प्रसन्न रहना है तो अपने शरीर और मन को सतत कार्य मे लगाओ। क्योकि खाली मन भूतो का डेरा है। बेकार व्यक्ति को ही शैतानी सूझती है।

सतत प्रयत्न :

□प्रारम्भिक पराजय मे कभी हताश मत बनो। निरन्तर युद्ध करते रहो सफलता सुनिश्चित है।

सत्कर्म :

□सत्कर्म की बाते श्रवण करने मात्र से जब हमारे मन मे आनन्द उत्पन्न होता है तो उसके आचरण मे कितना आनन्द होगा ?

सत्सग :

□सत्पुरुषो के साथ उठने बैठने से, उनके साथ मिलते जुलते से,

उनके अच्छे कर्तव्यो को जानने से, उनके वचन श्रवण करने से प्रज्ञा प्राप्त होती है ।

सत्य

☐तुम सत्य को पहचानोगे तो सत्य तुम्हे स्वतत्र करेगा ।

☐सत्य को पाना तो बहुत सरल है। बस एक ही शर्त है कि हमारा हृदय सरल हो। सरल हो जाओ और तुम पाओगे कि सत्य तो तुम स्वय ही हो। हृदय की सहजता और सरलता को पा लेना ही धर्म है ।

☐सत्य और तेल सदा उपर रहते है। सत्य बोतल के ढक्कन के समान है, उसे पानी मे दबा दीजिए वह उपर आ जायेगा।

☐सत्य ही भगवान है। 'सच्च खु भगव'

☐बर्फ और तूफान फूलो को तबाह कर सकते है लेकिन बीज नही मर सकते ।

☐कोई सत्य दूसरे सत्य का विरोधी नही हो सकता।

सत्यभाषी

☐सत्यभाषी एक बार जो वचन कह देता है वह मत्रूप हो जाता है। सैकडो रोगो की वह औषध बन जाता है। और दरिद्र के लिए वरदान ।

सफल .

☐वही सफल होता है जिसका काम उसे निरन्तर आनन्द

देना रहता है।

सफल कौन ?

□धन को प्राप्त करना ही जीवन की सफलता नही, किन्तु प्राप्त धन का सदुपयोग करना ही जीवन की वास्तविक सफलता है।

सफल नीति

□भलाई के साथ भलाई और बुराई के साथ बुराई यह व्यवहार की नीति है। किन्तु बुराई के साथ अच्छाई यह धर्म नीति है।

सफलता

□वही मनुष्य सफल हो सकता है जिसके मन मे नये-नये आविष्कारो को आविष्कृत करने की उमगे उठती रहती है। जो कर्मक्षेत्र मे पर्वत की तरह अडिग रहता है, जिसकी मानसिक शक्तियाँ तेजस्वी, अटल व प्रतापी होती है।

□सभी प्रकार की सफलताओ के लिए सच्चे पुरुषार्थ और धर्म की अपेक्षा रहती है।

सफलता का चिह्न :

□कठिनाइयो का बढना ही सफलता के समीप पहुचने का प्रधान चिह्न है।

सफलता की कुंजी

☐मनुष्य की सफलता उसकी प्रतिभा या अवसर की अपेक्षा निरन्तर अभ्यास एकाग्रता व कुशलता पर कही अधिक अव-लम्बित है ।

सफल व्यक्ति

☐प्रसन्न और मधुर व्यक्ति सदैव सफल होता है ।

सब्र .

☐सब्र जिन्दगी के मकसद का दरवाजा खोलता है, क्योकि सिवाय सब्र के उस दरवाजे की और कोई कुजी नही है ।

सभ्यता और सस्कृति :

☐सभ्यता शरीर है, सस्कृति आत्मा, सभ्यता जानकारी और विभिन्न क्षेत्रो मे महान् एव दुखदायी खोज का परिणाम है, सस्कृति ज्ञान का परिणाम है ।

सभ्यता की परख :

☐सभ्यता की सच्ची परख देश की जनसख्या, भव्य नगरो या अच्छी फसलो से नही होती, वरन् किस प्रकार के व्यक्ति देश मे जनमते है, इसी से होती है ।

समझदारी

☐मानव ! तू सम्पत्ति पाकर फूल कर कुप्पा हो जाता है और विपत्ति मे बडा व्याकुल हो जाता है । परन्तु यह क्यो नही

समझना कि यह तो भवान्तर मे किये हुये शुभाशुभ कर्मों के ही तो परिणाम है। दोनो मे समभाव रखना ही तो समझदारी है।

समता :

☐जब-जब बुद्धि समता की ओर बढती गई, त्यो-त्यो वह विकास के चरण चूमने लगी। किन्तु जब उसमे विषमता आई तो वह विनाश और पतनोन्मुख होती गई।

समन्वय :

☐विवाद कलह को जन्म देता है और सवाद समन्वय को। यदि हमे समन्वय को जन्म देना है तो हमे विवाद का अन्त करना होगा।

समभाव का रस :

☐पावभर का आम हो, पर उसे निचोडा तो तोलाभर भी रस न निकला तो वह आम किस भाव पडेगा ? घण्टो माला गिनी, अनेको सामायिकें व प्रतिक्रमण किये किन्तु समभाव का रस नही आया तो उस साधना का क्या मूल्य ?

समय :

☐समय, सत्य के सिवाय हर चीज को स्वाहा कर जाता है।

☐जो समय से आगे रहते है वे महान् है, जो समय के साथ चलते है वे साधारण, जो समय के पीछे-पीछे चलते है वे लघु है। अतः हे मानव ! जो समय से आगे है वह महान् है, परमात्मा है

भी। भक्ति आदि साधनो से परमात्मा को प्राप्त किया जा सकता है, किन्तु कोटि उपाय करने पर भी बीता हुआ समय नही बुलाया जा सकता।

☐समय से बहुत पहले काम निपटा लेना जल्दबाजी है, और समय निकल जाने पर मुह ताकते रहना आलस्य है। जो समय पर पुरुषार्थ द्वारा अपने साध्य को सिद्ध करता है उसे पछताना नही पडता।

☐समय की गति विचित्र है वह किसी की प्रतीक्षा नही करता।

☐जो समय रहते नही सभलते, समय उन्हे रहने नही देता।

समय मत लगाओ :

☐अच्छे कार्यो को करने मे विलम्ब नही करना चाहिए और बुरे कार्यों मैं शीघ्रता नही करनी चाहिए।

समय ही जीवन है

☐क्या आप सचमुच जीवन से प्रेम करते हो ? यदि हाँ, तो समय का अपव्यय क्यो करते हो ? क्या आप को मालूम नही कि समय ही आपका जीवन है।

समाज सुधार की चार भूमिकाएं

☐समाज सुधार की चार भूमिकाए है—

पहली भूमिका है—परिस्थिति-परिवर्तन। यह काम सरकार द्वारा हो सकता है।

दूसरी भूमिका है—हृदय परिवर्तन। यह कार्य सन्तो के द्वारा हो सकता है।

तीसरी भूमिका है—विचार परिवर्तन। यह विचारको व साहित्यकारो द्वारा हो सकता है?

चौथी भूमिका है—सेवाकार्य। यह समाजद्वारा हो जाते हैं।

समाधान :

☐सुख का अक्षय कोष मानव मन के समाधान मे हैं भौतिक सुख सुविधाओ मे नही। यदि मनुष्य को अन्दर मे समाधान मिलता हैं तो फिर साधन भी असाधन हो जाते है।

समाधि

☐जैसे नमक पानी मे गिरकर एकाकार हो जाता है वैसे ही जो मन और आत्मा मे एकाकार हो जाता है वही समाधिवान है।

समृद्धि :

☐धृति, क्षमा, दया, पवित्रता, करुणा, मधुरवाणी, मित्रो के साथ द्रोह न करना ये सात गुण मनुष्य की समृद्धि की वृद्धि करते हैं।

सम्पत्ति :

☐जो दुखी जनो की विपत्ति को नाश करती है वही सम्पत्ति है। शेष विपत्ति है।

सम्बन्धी नहीं :

☐यमराज का कोई सम्बन्धी नही है।

लक्ष्मी का कोई सम्बन्धी नहीं है।
वृद्ध व्यक्ति का कोई स्वजन नही।
स्वार्थी व्यक्ति का कोई सम्बन्धी नही।
मृत्यु का कोई अपना नही।

सम्मान :

☐आप सम्मान देने के लिए किसी को मजबूर नही कर सकते। किन्तु दूसरो को सम्मान दीजिए, वे स्वय मजबूर हो जायेगे कि आपको सम्मान दे।

सम्मान और अपमान

☐मनुष्य को सम्मानित बनने के लिए समस्त जीवन भी अल्प है किन्तु अपमानित होने के लिए एक क्षण भी काफी है।

सम्यक् विचार

☐सम्यक् विचार से मानव जीवन का प्रारम्भ होता है।

सर्वगुणसम्पन्नता

☐गुलाब का फूल रग,रूप और सौरभ के कारण फूलो का राजा कहलाता है लेकिन काटो का साथ होने के कारण वह बदनाम भी है। मानव सर्वगुण सम्पन्न हो यह असम्भव है, किन्तु अपने विशिष्ट सद्गुणो के द्वारा ससार मे प्रख्यात बन जाता है। जैसे आम वृक्ष अपने फलो के कारण, नागर बेल अपने पान के कारण और चन्दन काष्ठ अपनी महक के कारण प्रख्यात है।

सर्वोदय :

☐सब सुखी रहे, सब स्वस्थ रहें, सब कल्याणभागी बनें, कोई कभी दुःखी न हो।

सहनशक्ति :

☐यदि हम विरोध पर प्रेम द्वारा विजय नही पा सकते तो एक उपाय बचता है और वह है—सहन करना। हमें या तो सहन करना होगा या पलायन।

सह प्रवासी :

☐रेलगाडी का इंजन प्रबल वेग से अपने निर्दिष्ट स्थान पर अकेला ही चलकर नही जाता बल्कि अनेक डिब्बो को भी अपने साथ खीचकर ले जाता है। उसी प्रकार तीर्थंकर, श्रमण अपने ज्ञान के द्वारा हजारो भव्यो को प्रतिबोधित कर अपने साथ सिद्धधाम को ले जाते हैं। क्योंकि भगवान "तिन्नाण तारयाण" हैं।

सहायता दो :

☐जो आश्रयहीन है उन्हे निःसकोच आश्रय दो। क्योंकि आश्रय देने मे अपनी सौरभ बढती है।

सादगी :

☐सादगी जीवन का शृंगार अवश्य है किन्तु उसमे प्रदर्शन की भावना नही होनी चाहिए।

□चरित्र मे, इख्लाक मे, शैली मे सब चीजो मे बेहतरीन कमाल है—सादगी।

साधन-जीवन

□उद्योग, प्रयोग और योग-यही साधक के जीवन का सक्षिप्त स्वरूप है।

साधक-बाधक

□धर्म मे साधक एव बाधक इन्द्रियो का सदुपयोग और दुरुपयोग ही है।

साधना

□हमे साधना की चिन्ता करनी चाहिए सिद्धि की नही। साधना स्वय सिद्धि की चिन्ता करती है।

साधु

□ससार रूपी समुद्र मे साधुरूपी नौका धन्य है, जिसकी उलटी ही रीति है। उसके नीचे रहने वाले तिरते है और ऊपर रहने वाले नीचे गिरते हैं, अर्थात् मुनि जनो से नम्र रहने वालेतिर जाते हैं और नम्र न रहने वाले धर्म के स्वरूप का ज्ञान न होने से डूब जाते है।

सापेक्षवाद :

□अपने-अपने पक्ष मे ही परस्पर निरपेक्ष सभी मत मिथ्या है, असम्यक् है। परन्तु ये ही मत जब परस्पर सापेक्ष होते है, तब

सत्य और सम्यक् बन जाते है ।

सामायिक :

□सामायिक का अर्थ है—सावद्य अर्थात् पापजनक कर्मों का त्याग करना और निरवद्य अर्थात् पाप-रहित कार्यों का स्वीकार करना ।

सामायिक का फल

□एक आदमी प्रतिदिन लाख स्वर्णमुद्रा का दान करता है और दूसरा मात्र दो घडी की सामायिक करता है तो स्वर्ण-मुद्राओ का दान करने वाला व्यक्ति सामायिक करने वाले की समानता प्राप्त नही कर सकता ।

सार :

□सृष्टि का सार 'धर्म' है ।
धर्म का सार सम्यक्ज्ञान है ।
ज्ञान का सार 'सयम' है ।
और सयम का सार 'निर्वाण' है ।

सावधान :

□सावधान रहना ! जो आदमी तुम्हारे सामने दूसरे की निन्दा करता है, वह दूसरो के सामने तुम्हारी निन्दा अवश्य करता है । ऐसे आदमियो की बातो मे न फसना, नही तो बडी भारी आपत्तियो का सामना करना पडेगा ।

साहस

☐अपसाहस या दुस्साहस पशुता है। सत्साहस मानवता। साहस मे जब विवेक का पुट लगता है, तब वह सत्साहस कहलाता है।

☐साहस गया तो आदमी की आधी समझदारी उसके साथ गई।

☐विपत्ति के समय सबमे बडा मित्र साहस है। जिसका सहारा लेकर विपत्तिग्रस्त विपत्ति से पार पहुँचता है।

साहित्य :

☐बुद्धि के शैथिल्य को दूर करने का सर्वश्रेष्ठ उपाय साहित्य है। मन की कुण्ठाओ को, जडता को दूर करने की रामबाण औषधि साहित्य है। साहित्य बुद्धि और मन का परिष्कार करता है।

सीखते हैं

☐ज्ञानी विवेक से, साधारण जन अनुभव से, मूर्ख आवश्यकता से और पशु अनुसरण से सीखते है।

सीखो .

☐यदि तुम्हे आगे बढना है तो पहले की गई भूलो से आगे बढने का मार्ग खोजो।

सुख और आनन्द :

☐सुख और आनन्द ऐसे इत्र है, जिन्हे जितना अधिक आप दूसरो पर छिड़केंगे उतनी ही अधिक सुगन्ध आपके अन्दर आयेगी।

सुख-दुःख :

☐जिस प्रकार बिना भूख के खाया हुआ अन्न नही पचता, उसी प्रकार बिना दुख के सुख पच नही सकता।

सुख-विमुखता :

☐ऐसी कौन-सी वस्तु है जो हमे सुख से विमुख करती है। घमड, लालच, स्वार्थपरता और ऐश्वर्य की आकाक्षा।

सुखी :

☐वही आदमी सुखी है और सबसे ज्यादा सुखी है जो आज को अपना कह सके। कल के लिए रोने वाला सदैव सुख से वंचित रहता है।

स्नान :

☐तप और ब्रह्मचर्य बिना पानी का स्नान है।

स्पर्धा और प्रतियोगिता :

☐स्पर्धा असमर्थ व्यक्ति करता है और समर्थ प्रतियोगिता। स्पर्धा मे दूसरे को अभिभूत करने का विचार उग्र बनता है और प्रतियोगिता मे अपने विकास के प्रति सजग बनने का मनोभाव।

स्मशान :

☐ससार का मूक शिक्षक स्मशान है। उससे डरने की हमे आवश्यकता नही। चक्रवर्ती और दरिद्र वहाँ समान हो जाते है। विश्वविजयी योद्धा भी वहाँ नतमस्तक है। नश्वरता का पाठ हमे वही मिलता है।

स्याही की एक बूद :

☐स्याही की एक बूद दस लाख व्यक्तियो को विचारमग्न कर सकती है।

स्त्री :

☐स्त्री एक ऐसी पहेली है जिसे आज तक कोई समझ नही सका।

☐स्त्री जाति मे हर उम्र मे मातृत्व का अश रहता है, और वही अश उनमे सहिष्णुता, क्षमा और स्नेह को प्रेरित करता है, दुःख को कम करने की शक्ति लाता है, और इसी से उनका दिग्विजय इतना सरल हो जाता है।

☐स्त्री काटेदार झाडी को नयनरम्य बगीचा बनाती है, दरिद्र से दरिद्र घर को सुशील स्त्री स्वर्ग बना देती है।

☐सौंदर्य स्त्रियो को अभिमानी बनाता है। सद्‌गुण उसे प्रशसनीय बनाता है और नम्रता उसे साक्षात् देवी बनाती है।

स्वभाव :

☐स्वभाव को अच्छे बुरे की उपाधि देना गलत है। क्योंकि वह अपने स्वत के मकान मे है। हा, यदि, स्वभाव विभाव मे परिणत हो जाता हैं तो वह खतरनाक है।

स्वय देख नहीं सकता

☐दीपक दुनियाँ को प्रकाशित करता हैं किन्तु स्वय अन्धकार मे रहता है। उसे अपना अन्धेरा नही दिखाई देता। तद्वत् मानव दूसरे के गुणावगुण को बताता है, किन्तु अपने विषय में अन्धेरे मे रहता है। उसे अपने अवगुण नही दिखाई देते।

स्वर्ग :

☐जहा प्रेम, स्नेह, सहानुभूति, समवेदना और सद्भावना की अमृतमयी गगा बहती हो वही स्वर्ग है।

☐सात्त्विक गुणो का विकास ही मनुष्य के लिए स्वर्ग है।

स्वर्ण सूत्र :

☐मित्रो के प्रति सच्चा प्रेम, शत्रु के प्रति उदारता और प्रत्येक मनुष्य के साथ सद्भाव—ये तीन स्वर्ण सूत्र मानव को महान बनाते है।

स्वस्थ मन :

☐स्वस्थ शरीर मे ही स्वस्थ मन रह सकता है तथा इसके साथ ही यह भी उतना ही सत्य है कि स्वस्थ मन हो तो शरीर

भी स्वस्थ रहता है।

स्वस्थ हसी :

☐स्वस्थ हमी मनुष्य के चरित्र की बहुत वडी देन है। कष्टो मे हमने वाले ही चरित्रवान होते है।

स्वाध्याय :

☐स्वाध्याय से बढकर काई तप नही।

स्वार्थ :

☐जिस मानव मे स्वार्थ भरा हैं, उसके पास परार्थ कहाँ से आ सकता है। जिस पुष्प मे सुगन्ध नही, वहा भ्रमर कैसे आ सकते है।

हसी ·

☐मनुष्य वरावर वालो की हसी नही सह सकता, क्योकि उनकी हसी मे ईर्ष्या, व्यग्य एव जलन होती है।

☐नमक वडी अच्छी चीज है, पर जीभ पर छाले हो तब कैसा लगता है ? हसी वडी अच्छी चीज है, पर छाले पडे मन को वुरी लगती है।

हिम्मत ·

☐बीमारी मे, मुसाफरी मे, लडाई मे तथा नुकसान मे मनुष्य को हिम्मत नही हारनी चाहिए।

हृदय :

☐संसार की कटुताओ के सम्पर्क मे आकर हृदय या तो सदा के लिए भग्न हो जाता है या फिर सदा के लिए कडा।

हृदय की सहज वृत्तियाँ :

☐श्रद्धा, विश्वास, सत्य, न्याय, प्रेम, उदारता, धैर्य, आशा, उत्साह, दया, करुणा, त्याग और निर्भीकता ये हृदय की सहज सद्वृत्तियाँ हैं। सुसंस्कृत चित्त के ये स्वाभाविक सद्गुण हैं।

सुवर्ण-पुष्प

☐शूर, वीर, विद्वान और सेवाधर्म के ज्ञाता—ये तीन पुरुष पृथ्वीरूप लता मे ऐश्वर्य रूपी सुवर्ण पुष्पो का चयन करते हैं।

सेवा :

☐सेवा का अधिकार प्राप्त करने के लिए दो चीजे आवश्यक हैं, एक सेवा का अभिमान न होना तथा सेवा के बदले फल की कामना न करना।

☐सेवा के एक श्रेष्ठ गुण से आदमी महान बनता है। किन्तु उसमे एक शर्त है—निष्काम वृत्ति।

सेवा सदन :

☐जीवन न मनोरंजन का स्थल है न आंसुओं की खान। जीवन एक सेवा-सदन है।

सौदर्य ·

☐स्त्री मे सौदर्य लाया जाता है जबकि पुरुष मे स्वाभाविक होता है।

☐चारित्रयुक्त सौदर्य ही सच्चा सौदर्य है।

क्षमा :

☐अपने साथ की गई बुराई को वालू पर लिखो और भलाई को पत्थर पर।

☐क्षमा करना अच्छा है, भूल जाना उससे भी अच्छा है।

☐वदला लेना मानवी है, परन्तु क्षमा करना दैवी है। यदि हममे दूसरो को क्षमा करने की शक्ति नही तो प्रभु हमे कैसे क्षमा करेंगे ?

क्षुधा :

☐पेट जब भूखा होता है तब बुद्धि भी अनाचार की ओर दौडती है।'वुभुक्षित. कि न करोति पापम्'

त्राण

☐उत्कर्ष व अपकर्ष से त्राण पाने का एक ही विकल्प हैं और वह यह कि जब उत्कर्ष प्राप्त हो, तब अपने से अधिक उन्नत व्यक्तियो को देखे, और जब उपकर्ष अत्पीडित करे तब अपने से अधिक अवनत स्थिति वालो को निहारे।

ज्ञान :

☐ज्ञान जब इतना घमंडी बन जाय कि वह रो न सके, इतना गम्भीर बन जाय कि हंस न सके और इतना आत्म केन्द्रित बन जाय कि सिवाय अपने और किसी की चिन्ता न करे तो वह अज्ञान से भी अधिक खतरनाक होगा।

☐वही ज्ञान सच्चा ज्ञान है, जिससे हृदय और आत्मा पवित्र हो, बाकी सब ज्ञान का विपर्यास है।

☐मन रूपी उन्मत्त हाथी को वश करने के लिए ज्ञान अंकुश के समान है।

☐जीवन खेत है, मनुष्य किसान और कर्म बीज है। उन्हें बोना जैसा अनिवार्य है वैसा उन्हें काटना भी। बस इतना ही ज्ञान काफी है।

ज्ञान और क्रिया :

☐ज्ञान अंक है, तो क्रिया काण्ड उसके आगे लगने वाला बिन्दु। अंक के बिना शून्य का क्या मूल्य? ज्ञान के बिना क्रिया का क्या मूल्य?

☐ज्ञान और क्रिया का संयोग ही मोक्ष रूप फल देने वाला होता है। एक पहिये से कभी गाडी नहीं चलती। इसी प्रकार ज्ञान और क्रिया के संयोग से ही आत्मा मुक्ति प्राप्त कर सकता है।

☐आचारहीन ज्ञान नष्ट हो जाता ह और ज्ञानहीन आचार। जेसे वन मे अग्नि लगने पर पगु उसे देखता हुआ और अन्धा दौडता हुआ भी आग से बच नही पाता, जलकर नष्ट हो जाता है।

☐जानना काफी नही है, ज्ञान से हमे लाभ उठाना चाहिए, इरादा काफी नही है, हमे काम करना चाहिये।

ज्ञान का जनक :

☐शान्त चिन्तन ही ज्ञान का जनक हे। क्योकि ज्ञान पढने से नही, चिन्तन से प्राप्त होता है।

ज्ञान युक्त कर्म :

☐बन्धन मुक्ति केवल कर्म मे नही, केवल ज्ञान से भी नही। किन्तु ज्ञान युक्त कर्म मे होती है।

ज्ञान विराधना

☐ज्ञान की तथा ज्ञानी की निन्दा करना, गुरु आदि का अपलाप करना आशातना करना, ज्ञानार्जन मे आलस्य करना, दूसरे के अध्ययन मे अन्तराय डालना, अकाल मे स्वाध्याय करना ज्ञान-विराधना है।

ज्ञानसग्रह

☐मधुमक्षिका पुष्पो मे से विना पुष्पो को कष्ट पहुँचाये पराग सग्रह करती है उसी प्रकार हे मानव! तुम्हे भी पापो से अलिप्त

रहकर ज्ञान संग्रह करना चाहिए।

ज्ञानी :

□मन की बातें माने वह मानी और आत्मा की बात माने वह ज्ञानी।

ज्ञानी सजग रहे :

□अध्यात्मवादी व ज्ञानी को सतत सजग रहने की आवश्यकता है। क्योंकि उसकी जरासी भूल भी दुनिया की नजरों में चढ़ जाती है। शुभ्र वस्त्र में छोटा सा दाग तुरत नजर में आता है।

□□